खण्ड: 3, अंक: 08

अगस्त 2020

संश्लेषण

डी सी आर सी हिन्दी मासिक पत्रिका

सिनेमा और राजनीति
वाद, विवाद एवं प्रवाद

डी.सी.आर.सी.

विकासशील राज्य शोध केन्द्र

दिल्ली विश्वविद्यालय

मुख्य संपादक
प्रो. सुनील के चौधरी

संपादक
डा. रमेश भारद्वाज
नागेन्द्र कुमार
शरद कुमार यादव

संपादकीय मंडल
डा. अभिषेक नाथ
कुँवर प्रांजल सिंह
आशीष कुमार शुक्ल

© डीसीआरसी 2020

रूपाकंनः आर किशोर

संश्लेषण

सिनेमा और राजनीतिः वाद, विवाद एवं प्रवाद

अनुक्रमिका

संपादकीय		i-ii
1. सिनेमा की परिवर्तित प्रवृति एवं परिदृश्यता सृष्टि	– सृष्टि	1–3
2. राजनैतिक संस्कृति एवं व्यवहार का चित्रित माध्यमः भारतीय सिनेमा	– डॉ. अर्चना सौशिल्या	4–7
3. हिंदी सिनेमा में राजनीतिक ध्रुवीकरण का उदय एवं विकास	– काजल	8–11
4. स्त्री अभिव्यक्ति के बदलते परिप्रेक्ष्य और हिंदी सिनेमा	– निशांत यादव	12–16
5. सिनेमा और राजनीतिः संवैधानिक सुसंगतता	– डॉ० कु० आरती	17–20
6. सिनेमा, राजनीति एवं शिक्षाः एक जटिल रिश्ता	– अनिल कांबोज – डॉ० रितु तलवार	21–24
7. बॉलीवुड के गुड्डे–गुड़िया की पुड़िया का ऐतिहासिक विश्लेषण	– रजनी	25–28
8. भारतीय सिनेमा एवं राजनीतिः अभिशाप या वरदान?	– चित्रा राजौरा	29–33
9. अभिनेता व राजनेताः देश में विवादों के आधारस्तम्भ?	– प्रियंका बारगल – हितेन्द्र बारगल	34–37

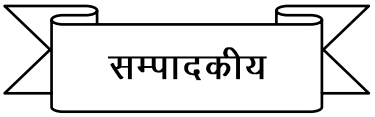

सम्पादकीय

किसी भी शोध केन्द्र की महत्ता उसकी शोध पत्रिका की गुणवता, निरंतरता एवं समसामयिकता पर आधारित होती है। ढाई वर्ष की इस दीर्घ शोध यात्रा में अपने र्निविरोध निरंतरता के अंर्तगत संश्लेषण के वर्ष 2020 के अष्ठम तथा अब तक के 25वें अंक को पाठकों के समक्ष प्रेषित करते समय हमें एक विशिष्ट आनंद की अनुभूति हो रही है। समसामयिक विषयों से प्रेरित संश्लेषण का यह रजत जयंती अंक केन्द्र से संबद्ध समस्त साथियों व शोधार्थियों के मध्य एक उत्सव के रुप में सदैव स्मरणीय रहेगा।

21वीं शताब्दी के नवीन भारत में जहाँ राजनीति अपने परिवर्तनीय परिदृश्य से प्रभावित हो रही है वहीं सिनेमा के समसामयिक परिवर्तन भी दृष्टांत हो रहे हैं। राजनीति एवं सिनेमा के मध्य अंर्तसंबध एवं अंर्तविरोध किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए नए सरोकारों, संवादों तथा समस्याओं के संघष का बोध कराता है। भारतीय सिनेमा में आए इस आमूलचूल परिर्वतन को बॉलीवुड से कोलीवुड तथा तेलीवुड तक देखा जा सकता है। सिनेमा में तकनीकी परिर्वतन के अतिरिक्त अन्य कारकों जैसे देशीय बनाम् बाह्य, प्रतिष्ठित बनाम नवागन्तुक, मादकता बनाम उत्पादकता, आपराधिक एवं आंतकी शक्तियों का विशिष्ट योगदान रहा है। इन समस्त कारकों का आधार किसी न किसी रुप में राजनीति से प्रेरित एवं प्रभावित रहा है।

राजनीति एवं सिनेमा के मध्य इस गठजोड ने हॉल ही में अपराधिक जगत से संबद्ध विभिन्न प्रश्नों को उजागर किया है। ख्यातिविद एवं राजनीतिज्ञों के इस संबंध ने मादक व्यसन तथा राजनीतिक संबंध को प्रदृशित किया है। गत माह से बॉलीवुड और राजनीतिज्ञों के मध्य प्रशय ने अपराध एवं मादक पदार्थों के सेवन मे लीन प्रतिष्ठित व्यक्तियों की कलई खोलने का कार्य किया है। यद्यपि इन गतिविधियों का केन्द्र मुबंई रहा है, इनकी तारों को भारत के विभिन्न सिनेमा उद्योगों में भी देखा जा सकता है।

विषय की समसामयिकता को ध्यान में रखते हुए केन्द्र ने 'सिनेमा और राजनीतिः वाद, विवाद एवं प्रवाद' विषय पर लेख आमंत्रित किये। नो उत्कृष्ट लेखों को सम्पादकीय मंडल ने चयनित किया जो आप सभी के समक्ष एक प्रकाशित पत्रिका के रूप में उल्लेखित हो रहे हैं। ये समस्त लेख मौलिक होने के साथ–साथ सिनेमा और राजनीति के विभिन्न प्रावधानों एवं समाधानों को भी

संबोधित करने का प्रयास कर रहे हैं। स्वतंत्र चिंतन पर आधारित लेखकों के विचार उनकी रचनात्मकता, सृजनात्मकता एवं मौलिकता को भी इंगित करते हैं।

वर्ष 2020 के संश्लेषण के इस अगस्त माह के अष्ठम अंक में प्रकाशित लेखों पर पाठकों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर ही हम सितम्बर माह के अपने नवम समसामयिक तथा महत्वपूर्ण अंक में और अधिक गुणात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास करेंगे।

संपादक मंडल

शुक्रवार, 2 अक्तूबर 2020

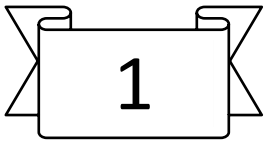

सिनेमा की परिवर्तित प्रवृति एवं परिदृश्यता

सृष्टि

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविधयालय

पूर्व के कुछ वर्षों में सिनेमा में एक नई प्रवृति का परिवेश हुआ है। जिसके अंतर्गत मुख्य रूप से समकालीन व्यक्तियों की जीवनी पर आधारित चलचित्र को प्रदर्शित किया गया है। जैसे गुंजन सक्सेना "द् कारगिल गर्ल" एक ऐसी ही फिल्म है, जो भारतीय वायु सेना की पायलट गुंजन सक्सना के जीवन पर आधारित है। गुंजन सक्सेना वो साहसी पायलेट है, जिन्होंने कारगिल युद्ध में अधिक समझदारी, सूझबुझ व साहस का परिचय दिया। इस युद्ध के दौरान श्रीनगर कैम्प से उन्होंने 40 बार कारगिल के लिए उड़ाने भरीं।

सीमा पर लड़ रही भारतीय सेना को पहुंचाने व गोले–बारूद से घायलों को निकाल कर लाने की जिम्मेदारी उन्हें दी गई थी, जिसे उन्होंने स्पष्ट रूप से निभाया व सिद्ध कर दिया कि महिलाएं साहसी होती है व किसी पुरुष के पीछे नहीं होती। यद्यपि पूर्ण रूप से पुरुषों द्वारा संचालित वायु सेना में पायलेट के रूप में गुंजन सक्सेना का प्रवेश आसान नहीं था। उन्हें समकक्ष पायलेटों की अधिक उपेक्षा व अपमान सहन करना पड़ा। इसके पूर्व भी बॉक्सिंग चौम्पियन मैरीकॉम, धावक मिल्खा सिंह, क्रिकेटर महेंद्र सिंह धोनी, कुश्ती के लिए प्रसिद्ध गीता फोगाट बहनें एवं विश्वविख्यात गणितज्ञ शकुंतला देवी आदि समकालीन कलाकारों पर पूर्व के वर्षों में श्रेष्ठ, सर्वोत्तम व सुप्रसिद्ध चलचित्रों को प्रदर्शित किया गया।

इसके पूर्व के दौर में ऐतिहासिक विभूतियों जैसे भगत सिंह, महात्मा गांधी, सरदार पटेल, सुभास चंद्र बोस या छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप सिंह आदि पर चलचित्र बनते रहे है। अर्थात नायक मात्र वहीं नहीं होते जो युद्ध में विजयी होते है, अपितु प्रत्येक वो व्यक्ति जो अपने कार्यक्षेत्र में अपने परिश्रम, लगन व निष्ठा की छाप छोड़ता है, वहीं जनता की दृष्टि में वास्तविक अभिनेता होता है। चाहे वो खेल में, समाज सेवा में, साहित्य या पत्रकारिता में, कला व संगीत में हो, ऐसे "वास्तविक जीवन के अभिनेताओं" के जीवन के प्रत्येक पहलू, अंश व आयाम को जानने

की जिज्ञासा सामान्य लोगों में सदैव बनी रहती है। इसलिए कहा जा सकता है कि सिनेमा में आए इस नई प्रवृति के साथ–साथ दर्शकों की रुचि व वरीयताओं में भी परिवर्तन हो रहा है।

टेलीविजन के आने से पूर्व नाटक व फिल्में ही सामान्य जनता के मनोरंजन का मुख्य स्रोत होते थे। टेलीविजन के आने के पश्चात मनोरंजन के स्रोतों का अधिक विस्तार हुआ है। अब प्रत्येक व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार अपने मनोरंजन के लिए अनेक रूप से कार्यक्रम देख सकता है। ऐसे में सिनेमा के लिए यह बाध्यता नहीं है कि वो मात्र मनोरंजन को ही लक्ष्य बनाकर चलचित्र बनाए। मनोरंजन के अतिरिक्त, सूचना देना, शिक्षित करना भी इनका दायित्व होता है, जिसे निभाने में सिनेमा पीछे रहा है, अपितु इन परिवर्तित परिस्थितियों में सामान्य दर्शक भो अधिक जागरूक हो गया है। उसे इतिहास, धर्म, संस्कृति या "वास्तविक जीवन के अभिनेताओं" की जीवनी पर आधारित चलचित्र देखना अच्छा लगता है।

समकालीन अभिनेता पर चलचित्र बनाने का एक और लाभ यह है कि हम उस व्यक्ति को उसके जीवन काल में ही वो प्रसिद्धि दे देते है जिसका वा अधिकारी है। परंतु प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त राजनीति, भाई–भतीजावाद, लिंगभेद या भ्रष्टाचार के चलते वह इसे प्राप्त करने में वंचित रह जाता है। इसी संदर्भ में, महेश भट्ट की नई फिल्म "सड़क–2" के ट्रेलर की वीडियो को सोशल मीडिया के 11.65 मिलियन नेट–नागरिकों की ओर से "डिसलाइक्स" का विश्व रिकार्ड ही बना दिया। अंग्रेजी गायक जस्टिन वीवर का "वेवी" गाना दो लाख डिसलाइक्स से पीछे रह गया।

विभिन्न फिल्म विशेषज्ञों का मानना है कि ये डिसलाइक्स व अरुचि सोशल मीडिया में सक्रिय नेट–नागरिकों की ओर से सुशांत सिंह राजपूत की मृत्यु पर अर्पित श्रद्धांजलि की तरह है, इस स्वरूप में यह श्रद्धांजलि कम, घृणानजलि अधिक है। यह क्रोध व आक्रोश इतना अधिक रहा कि अभिनेता संजय दत्त की गंभीर बीमारी की सूचना भी कोई संवेदना व सहानुभूति उत्पन्न नहीं कर पाई। नए अभिनेता सुशांत सिंह राजपूत की रहस्यमय परिस्थितियों में असामयिक मृत्यु न हुई होती और सोशल मीडिया से लेकर टेलीविजन आदि द्वारा सुशांत सिंह राजपूत की मृत्यु के पीछे "बॉलीवुड माफिया" व उसके अभिजन समूह की भाई–भतीजावादी रहस्यमयी भूमिका की ओर संकेत करता है।

ऐसे ही क्रोध व आक्रोश का भय अभिनेता शाहरुख खान को भी है। वे भी संवेदना व सहानुभूति पाने के लिए कह चुके है कि पठान न चली तो उनका घर बिक जाएगा। कुछ ऐसा ही आक्रोश का वातावरण अभिनेता आमिर खान की तुर्की यात्रा को लेकर बना है। अपनी फिल्म "लाल सिंह

चड्डा" के लिए तुर्की गए थे। वहाँ तुर्की के इस्लामी, पकिस्तानपरस्त और स्वयं को इस्लाम का प्रमुख बताने वाले तानाशाह की बेगम से मिले। इस भेंट के चित्र बेगम ने सोशल मीडिया पर प्रसारित कर दिए। जैसे ही यह सूचना सोशल मीडिया पर प्रसारित हुई वैसे ही सूचना चौनलों ने आमिर खान की आलोचना प्रारंभ कर दी। विभिन्न लोगों की व्याधि रही कि तुर्की के प्रमुख भारत के शत्रु पाकिस्तान का मित्र है, जो धारा 370 पर भारत का विरोध करता रहा है, उस देश के तानाशाह की पत्नी से आमिर खान मिलने क्यों गए। यह तो शत्रु से हाथ मिलाना हुआ। एक विचार–विमर्श में तो यह तक कहा गया कि हमें आमिर खान के बारे में सोचना होगा कि आप किसी देश में फिल्म बनाने जाते है तो क्या उस देश के मुखिया या उसकी पत्नी आदि से मिलते है।

अतः देखा जा सकता है कि इन वाद–प्रवादों में प्रवाद करने वालों के विशेष प्रकार के राष्ट्रवाद के संकेतार्थ स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होते है। सड़क–2 के ट्रेलर को लेकर भी ऐसे ही विचार व्यक्त किए गए। सभी चाहते है कि सुशांत सिंह राजपूत को न्याय मिले, अपितु जिस रूप से सुशांत सिंह राजपूत की मृत्यु की जांच से सिनेमा की संस्कृति व उसके कुछ विशेष निर्माता, निर्देशक व नायक सामने आए, उसक निहितार्थ प्रारंभ में इतने स्पष्ट नहीं थे, जितने अब है। यह सिनेमा पर सोशल मीडिया का नया स्वरूप है, जो सांस्कृतिक राष्ट्रवाद अब तक दैनिक राजनीति तक सीमित था, अब सांस्कृतिक जगत के अंतर्गत भी प्रदर्शित होने लगा है।

♦♦♦♦♦

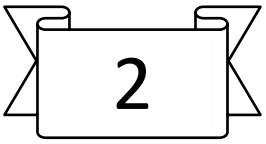

राजनैतिक संस्कृति एवं व्यवहार का चित्रित माध्यमः भारतीय सिनेमा

डॉ. अर्चना सौशिल्या

ऐसोसिएट प्रोफेसर, अदिति महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

राजनीतिक संस्कृति के निर्माण में समाजिक, संस्कृति, वैचारिक धारणायें महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है, और यही राजनैतिक संस्कृति, राजनीतिक व्यवहार का जन्म देती है। व्यक्ति का मूल्य, उसकी अवधारणायें, सोच उसके उस परिवेश का परिणाम होती है, जिन्हें वह उठते बैठते देखता और सुनता है। अचेतन मन में ये धारणायें तथा विचार इतनी पैठ जमा लेती हैं, कि उसके व्यवहार एवं क्रियाकलापों में वह परिलक्षित होने लगता है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में सिनेमा जगत के पात्रों ने, उनकी भूमिका ने, भारतीय मानसिकता को अत्यधिक प्रभावित किया है। इतिहास, राजनीतिक पहलुओं का रूपांतरण, उनके शब्द शैली तथा पात्रों के व्यवहारों ने अच्छे व बुरे सभी रूपों में जनमानस के विचारों में हलचल तथा आक्रोश दोनों ही उत्पन्न करते हैं।

सिनेमा मात्र मनोरंजन का माध्यम नहीं अपितु 'ज्ञान' को वितरित का भी आधार बन गया है। साठ के दशक में निर्मित फिल्में देवदास, सरस्वतीचंद्र, दिल अपना और प्रोत पराई मात्र मानवीय प्रेम का प्रतीक नही थी, अपितु जानलेवा बिमारी, सामाजिक मूल्यों के प्रति चेतन मन को भी दर्शाती थीं जिसे आज के समाज में आधुनिकता के दौर में पैरों तले कुचल दिया गया है। आज मानवीय मूल्यों, जीवन संस्कारों की जो क्षति हुई है उसे पूरा करने लिए 'मर्दानी', 'पिंक', 'हमारा दिल आपके पास है', जैसी फिल्में बनाकर समाज को सहिष्णु तथा आचार संहिता मानने पर बाध्य भी किया है। आस्था को जीवित रखने में धार्मिक चलचित्रों का भी योगदान रहा है, जिसने संस्कृति और संस्कार को परिलक्षित करके हमें हमारे मानवीय मूल्यां से पहचान बरकरार रखी है। 'मणिकर्निका' तथा 'वाजीराव मस्तानी' ने जहाँ युवा मन में ऐतिहासिक संस्कृति को जागृत किया, वहीं 'ब्लैक' तथा 'लज्जा' में पुरुष संकारों की भी बखूबी व्याख्या की गई। राजनीति समाज का एक पहलू है और राजनीतिक नीतियाँ, समाजिक क्रियाओं आर प्रतिक्रियाओं का प्रत्युत्तर होती हैं, और इनको सिनेमा 'सजीव' रूप में मन मानसिकता में जीवित रखता है।

चलचित्रों ने राजनीतिक पात्रों के साथ, राजनीतिक गतिविधियाँ, राजनीति एवं नौकरशाही तथा बाहुबलियों के साठगांठ का भी विचित्ररूप प्रस्तुत किया है, जो अत्यंत हो दुःखद एवं समाजिक पतन का परिचायक भी बना है। हाशिये पर रहने वाले, अनुसूचित जाति, जनजाति, महिलाओं पर हो रहे अत्याचार एवं पुलिसकर्मियों की सरकार के साथ साठगांठ को चित्रित करके जिस विभत्स रूप को जनता के सामने लाया जाता है, वह सराहनीय भी है एवं निन्दनीय भी है। जो समझ सके वह सर्तक हो गये, जो सत्य सह नहीं पाये उन्हें कठघरे में खड़ा कर दिया। वस्तुतः अवलोकन करे तो नब्ब प्रतिशत भारतीय सिनेमा, समाजिक कुरीतियों, राजनीतिक व सरकारी गतिविधियों के ही आस–पास घूमती रही है, क्योंकि हर कहानी लेखक, डायरेक्टर इसी समाज का भाग होता है वह जो भी सोचता है या अनुभव करता है– यह उसके आसपास ही घटित होती है। समाजिक गतिविधियों, विचार शैली, अप्रत्याशित अमानवीय घटनाओं को चित्रित करके वह निःसंदेह एक प्रचारक की तरह भी काम करता है।

सिनेमा समाज व राजनीति का आईना बन गया है। लोग दोष देते हैं– सिनेमा द्वारा अभद्र व्यवहार, अपशब्द तथा अनजानी बातों से जनता का परिचय कराने पर। यह सत्य है, परंतु, प्रश्न यह उठता है कि क्या आँखे बंद कर लेने से, कानों को ढँक कर बैठ जाने से 'समाज का मैल' समाप्त हो जायेगा? आये दिन हो रहे, घाटाले, महिलाओं पर अत्याचार, बाल प्रताड़ना के बारे में जानना एवं जागरूक होना किसी भी अर्थ में गलत नहीं है– जबतक जागरूकता नही होगी, तबतक सामाजिक कुरितियाँ, राजनीतिक अपराध और आर्थिक घोटाले बंद नहीं होंगे। सिनेमा अगर समाज और राजनीति का दर्पण है– तो राजनीति समाज एवं स्वयं मानव भी 'सिनेमा की सोच का जन्मदाता।

सिनेमा के द्वारा, सामाजिक राजनीतिक मुद्दों पर प्रकाश डालकर राजनीतिक, समाजिक चेतना जगाई जाती है जो मतदाता के दिलदिमाग को प्रभावित करके राजनीतिक आंकड़े तय करती है। कुछ सिनेमा जो विवादों में भी घिरे होने पर भी जनता ने उन्हें देखना पसंद भी किया एवं संश्लेषण भी किया, उदाहरण स्वरूप 'किस्सा कुर्सी का', 'आँधी', 'गुलाल', 'गंगाजल' आदि। जनता सत्य से भी अवगत हुई और अपने विचारों से मतदान देकर सरकारों को भी गढित किया।

प्रारंभ से लेकर आज तक सिनमा जगत के किरदारों में, लोगों ने अपना 'राजनेता, गुरु' और 'मसीहा' देखा है।, एन.टी. रामाराव, एमजीआर, जयललिता से लेकर राजबब्बर, शत्रुघ्नसिन्हा ने राजनीतिक कुर्सी संभाली है। इन किरदारों का प्रयोग राजनीतिक नीतियों को सफल बनाने के

लिए भी किया जाता है और पूर्ण सफलता भी मिली है, मसलन, पल्स पोलियो अभियान, (अमिताभ बच्चन) स्वच्छ भारत अभियान एवं रोड सेफ्टी (अक्षय कुमार)। सिनेमा जगत के इन पात्रों ने बच्चों क्या, बड़े बूढ़ों की मानसिकता को भी झंकझोरा है।

राजनीतिक दल तथा राजनेता इन्हीं 'पात्रों' को आगे करके जनता का 'जनमत' भी हासिल करते हैं। आज की साक्षर युवा पीढ़ी भी इन किरदारों से बहुत हद तक प्रभावित होकर अपना दल एवं नेता चुनती है। हिन्दी सिनेमा का 'नाम' एवं कहानी भी जिन मुद्दों को चित्रित करती है उसे राजनतिक दल भी समयानुसार भुना ही लेती है –जैसे ''द एक्सीडेंटल प्राइम मिनिस्टर', 'उरी : द सर्जिकल स्ट्राइक' के समय ही ''पी.ए. नरेन्द्र मोदी' जैसी फिल्मों ने, एन.डी.ए के घोषणापत्रों में किये गये दावों की अनदेखी कहानी को उजागर कर दिया और राष्ट्रियता की माँग को कोई भी भारतीय अनदेखा नहीं कर पाया। अक्षय कुमार को 'टायलेट' तथा 'पैड', ने जहाँ नारी सशक्तिकरण' एवं सवच्छता की बात उठा कर एन.डी.ए. सरकार के स्वच्छ भारत मिशन को सफल बनाया, वहीं उर्मिला मतोंड़कर ने मराठी होने का फायदा कांग्रेस सरकार को दिया। भारतीय राजनेताओं के किरदारों पर बनी फिल्में भी समाजशास्त्रियों के लिए शोध का विषय बनता जा रहा है। चेतना, सशक्तिकरण का एक मजबूत माध्यम–चलचित्र, समाज के लिए कितना सार्थक हो सकता है!

इस सिनेमा ने हमारी संसद को भी आकर्षित किया है, जिस का सिलसिला पृथ्वीराज कपूर (1960) ने संसद के सदस्य के रूप में की और उसके बाद इसकी कहानी विनोदखन्ना, शत्रुघ्नसिन्हा, स्मृति ईरानी, जयाबच्चन, राज बब्बर, किरण खेर तथा रेखा तक भी पहुँची, जिनके जोशीले भाषण और व्यक्तित्व के प्रभाव से सांसद क्या जनता भी चुप रह जाती है और राजनीति की धारा भी बदल जाती है। दक्षिण भारत में इन किरदारों ने राज्यों में महानायकों की भूमिका अदा करके सत्ता को पकड़े रखा – जैसे एन.टी. रामाराव, एमजीआर, जयाललिता आदि। कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा हमारे प्रजातंत्र पर सिनेमा और इसके विभिन्न किरदारों का प्रभुत्व भी रहा है और राजनीति भी खेली गई है।

अंततः यह कहना सार्थक होगा कि विश्व का सबसे बड़ा प्रजातांत्रिक देश – 'भारत' जो अनेक समस्याओं से आज भी जूझ रहा है, यहाँ सिनेमा एक ऐसा 'चित्रित साधन' बन गया है जो ना सिर्फ सामाजिक, सांस्कृतिक परम्पराओं को लक्षित करता है, अपितु राजनीतिक विकास के लिए नये रास्तों का भी सृजन कर रहा है। दर्शक मात्र दर्शक नहीं, एक पढ़ा लिखा समझदार नागरिक भी है, वह देखता, सुनता और आत्मसात करता है एवं अनुकरण भी। उसी प्रकार डायरेक्टर,

प्रोड्यूसर, कहानी लेखन वही दिखाते, सुनाते हैं, जो वो 'समाज' से पाते हैं। समाज व सिनेमा आज एक दूसरे के पूरक बन गये हैं और राजनीति को परिभाषित करने में सिनेमा एक माध्यम। सिनेमा आज के सन्दर्भ में खुद एक राजनीति बन गई है जहाँ नेता दल, ड्रग माफियाँ सभी संल्ग्न हैं। पक्ष विपक्ष सभी अपने प्यादे फेंक कर सिनेमा पर हावी होते हैं। कौन किसके पक्ष में जाता है। यह दर्शक ही तय कर सकते हैं और यह दर्शक कोई और नहीं हम आप भारतीय नागरिक ही हैं।

♦♦♦♦♦

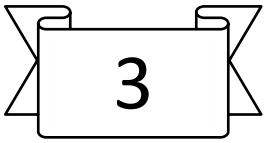

हिंदी सिनेमा में राजनीतिक ध्रुवीकरण का उदय एवं विकास

काजल

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

हिंदी सिनेमा जगत हमेशा से लोगों के लिए मनोरंजन का एक साधन मात्र रहा है, जिसमें प्रस्तुत कहानियों एवं पात्रों से व्यक्ति एक चलचित्र के माध्यम से जुड़ने लगता है। भारतीय सिनेमा में दर्शाए जा रहे चलचित्र में समय–2 पर परिवर्तन आते रहे हैं, जिसका विश्लेषण बहुत–से शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है। परन्तु भारतीय सिनेमा में अब जो परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं वह केवल चलचित्रों के सन्दर्भ में ही नहीं अपितु यह चलचित्र का निर्माण करने वाले निदेशकों एवं चलचित्र में पात्रों की भूमिका निभा रहे अभिनेता व अभिनेत्री के व्यक्तिगत राजनीतिक विचारों में भी देखने को मिल रहा है। यह परिवर्तन मुख्यतः 2014 के आम चुनावों के पश्चात् अधिक देखने को मिला है। वर्तमान समय में अधिकतम सिनेमा जगत राजनीतिक गुटों में विभाजित है। हालाँकि भारतीय सिनेमा में गुटबंदी का होना कोई नई बात नहीं है। पहले भी अभिनेता और अभिनेत्रियों द्वारा अपने सफल भविष्य के लिए किसी बड़े प्रोडक्शन हाउस या बड़े अभिनेता के गुटों के बीच विभाजित होते देखा है। परन्तु 2014 के पश्चात सिनेमा जगत के अधिकतम लोगों की राजनीतिक अभिव्यक्ति में बहुत स्पष्टता देखने को मिली है।

हिंदी सिनेमा व राजनीति के मध्य उभरते नए सम्बन्ध व समूह

हिंदी सिनेमा के चलचित्रों ने बहुत बार राजनीतिक व सामाजिक मुद्दों और घटनाओं को अपना विषय बनाया है, परन्तु जब भी उनसे किसी राजनीतिक विषय पर उनके विचार जानने का प्रयास किया गया तो उन्होंने ऐसे प्रश्नों को हमेशा टालने का प्रयास किया। बीते छः वर्षों में ऐसी बहुत–सी गतिविधियाँ हिंदी सिनेमा में देखने को मिली हैं जिनके द्वारा हिंदी सिनेमा में राजनीतिक विचारों को लेकर विभाजन देखा गया है। जिसके अंतर्गत न केवल अभिनेता, अभिनेत्री और निदेशक अपितु संगीतकार भी शामिल हुए हैं। परन्तु 2014 से पूर्व ऐसी घटनाओं की संख्या कम ही रही। 2014 से पूर्व सिनेमा जगत का कोई भी व्यक्ति स्पष्ट रूप से अपने

राजनीतिक विचार नहीं रखता था। परन्तु 2014 के आम चुनावों में जब भारतीय जनता पार्टी से नरेंद्र मोदी का नाम प्रधानमंत्री पद के लिए घोषित किया गया तो सिनेमा जगत के बहुत से महत्वपूर्ण लोगों ने स्पष्ट रूप से अपने विचार समर्थन व विरोध के रूप में सामने रखे। उदाहरणतः 2014 के चुनावों से पहले लता मंगेशकर (प्रसिद्ध गायिका) ने कहा कि वह मोदी को प्रधानमंत्री के रूप में देखना चाहेंगी, इसी के साथ 2014 और 2019 में मोदी जी के शपथ ग्रहण समारोह में सिनेमा जगत के बहुत से व्यक्तियों का उपस्थित होना। 2014 के चुनावों से पहले, हिंदी सिनेमा जगत के कई प्रमुख नामों ने, एक अभूतपूर्व कार्रवाई में, हस्ताक्षर अभियान के रूप में अपील दी थी, जिसमें लोगों को मोदी के लिए वोट न करने को कहा गया था (2019 में, निश्चित रूप से, दोनों गुटों से, 600, 900, 1300 हस्ताक्षर की सूची देखी गई)।

जिस हिंदी सिनेमा के लोग पहले राजनीतिक विषयों पर अपने कोई विचार या टिप्पणी नहीं देते थे, वह 2014 के बाद से अपना समर्थन और विरोध बहुत उत्साह से समाचार व सोशल मीडिया के माध्यम से सामने रखने लगे। जिसके पश्चात हिंदी सिनेमा राजनीतिक और विचारधारात्मक रूप से दो गुटों में विभाजित हो चुके थे और हर गुट के कुछ विशेष नाम व चेहरे थे। यह चेहरे 2019 के चुनाव तक आते –2 सोशल मीडिया एवं चुनाव प्रचार के योद्धा बन चुके थे जो राजनेताओं की तुलना में अधिक उत्साह और रचनात्मकता के साथ चुनावी लड़ाई को दैनिक आधार पर आगे बढ़ाते चले गए। हिंदी फिल्म उद्योग के भीतर सरकार या दल के लिए ऐसी प्रतिबद्धता व समर्थन कभी नहीं रहा है। जिसने निश्चित रूप से 'दक्षिणपंथी' दल को समर्थन प्रणाली के रूप में पहचानने योग्य, रचनात्मक और लोकप्रिय समर्थकों का समूह दिया।

लेफ्ट लिबरल बनाम राष्ट्रवादीः

वर्तमान युग सोशल मीडिया का युग माना जाता है, जहाँ व्यक्ति अपने विचार व अपने जीवन से जुडी हर छोटी–बड़ी गतिविधियों को सोशल मीडिया के माध्यम से अपने जान–पहचान के लोगों के साथ साझा करता है। कहीं न कहीं 2014 से ही सोशल मीडिया को राजनीति एवं अभिव्यक्ति के एक अहम यंत्र के रूप में देखा गया है। शायद यही कारण है कि हिंदी सिनेमा जगत के लोगों ने भी अपने विचार सोशल मीडिया के द्वारा साझे करने प्रारम्भ किये। परन्तु उनकी यह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता ने धीरे–२ राजनीति का रूप लेना शुरू कर दिया। जिसको मुख्य रूप से कठुआ में हुए बलात्कार की घटना के बाद से देखा गया, जिसके अंतर्गत अधिकतम हिंदी सिनेमा के लोगो ने इसका विरोध किया, जिसमे व्यक्ति को अपराधी न ठहराते हुए संपूर्ण हिन्दू धर्म को अपराधी ठहराने का प्रयास किया गया। इस घटना के पश्चात ऐसी और भी घटनाएँ भारत के

विभिन्न भागों में हुई, जिनमें मुस्लिम समुदाय के अपराधी भी थे, परन्तु उन घटनाओं के संदर्भ में किसी भी अभिनेता या अभिनेत्री ने अपना विरोध नहीं जताया, जिसके चलते सोशल मीडिया पर आम जनता ने हिंदी सिनेमा के इन लोगों से प्रश्न करना प्रारम्भ कर दिया और इसे बॉलीवुड का चयनात्मक आक्रोश बताया गया, जिसके अंतर्गत लोगो ने कहा कि बॉलीवुड का यह गुट लेफ्ट लिबरल का गुट है जो केवल एक समुदाय विशेष के लिए ही विरोध करते हैं और उन्ही के लिए न्याय मांगते हैं, जबकि हिन्दू धर्म के लोगों के साथ घाटी घटना की यह उपेक्षा करते हैं। इसके पश्चात जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में हिंदी सिनेमा के लोगों का जाना व सरकार के प्रति विद्रोह कर रहे छात्रों के साथ मिलना इन सभी घटनाओं ने सिनेमा जगत के लोगो के राजनीतिक विचारों को सामने रखने का प्रयास किया। 2019 के वर्ष तक विचारों एवं गुटों के विषय में स्पष्टता आ चुकी थी। जिस स्पष्टता के चलते आम जनता द्वारा भी लिबरल बनाम राष्ट्रवादी के इस विवाद को आगे बढ़ाया गया।

हिंदी सिनेमा का राजनीतिक ध्रुवीकरणः वाद–विवाद का दौर

जहाँ 2014 चुनावों ने हिंदी सिनेमा में सरकार के समर्थकों व विरोधियों के गुटों का निर्माण किया वहीं 2019 आम चुनावों ने अभियान के माध्यम से चुनावी प्रक्रिया का हिस्सा बनने का अवसर प्रदान किया। सोशल मीडिया के माध्यम से दोनों ही गुटों के लोगों द्वारा हैशटैग्स चलाये गए, सर्वप्रथम विरोधी गुट द्वारा वोट आउट हैट्रेड हैशटैग चलाया गया जिसके पश्चात समर्थक गुट से नमो फॉर न्यू इंडिया हैशटैग चलाया गया जिसमे 900 कलाकारों ने भाग लिया। हालांकि 2019 में भारतीय जनता पार्टी की जीत के पश्चात हिदी सिनेमा के दोनों गुटों के मध्य सरकार एवं सरकार की नीतियों को लेकर सीधे तौर पर वैचारिक मतभेद देखने को मिले जिसमे

मुख्यतः नागरिकता संशोधन अधिनियम और नैशनल रजिस्टर ऑफ़ सिटीजन बिल को लेकर सबसे अधिक विरोध किया गया। हिंदी सिनेमा में दोनों ही गुटों से कुछ मुख्य नाम रहे हैं जैसे समर्थक समूह से अनुपम खेर, कंगना रनौत, विवेक ओबेरॉय, कबीर बेदी, विवेक अग्निहोत्री, रनवीर शोरे, शंकर महादेवन, कोएना मित्रा, अलोक नाथ, अभिजीत भट्टाचार्य, मुकेश खन्ना आदि व विरोधी समूह से अनुराग कश्यप, स्वरा भास्कर, ज़ीशान अयूब, सोनी राज़दान, शबाना आज़मी, जावेद अख़्तर, पूजा भट्ट, नसीरुद्दीन शाह, कोंकणा सेन शर्मा आदि हैं। मुख्यतः यह वह नाम हैं जिनके द्वारा स्पष्ट रूप से सरकार या सरकार की नीतियों का समर्थन या विरोध किया गया है। यहाँ तक कि इस राजनीतिक ध्रुवीकरण के चलते बहुत से निदेशक व अभिनेताओं ने राजनीतिक

विषयों पर चलचित्रों का भी निर्माण किया जिसमे "दी एक्सीडेंटल प्राइम मिनिस्टर" एवं "पीएम नरेंद्र मोदी" नामक चलचित्रों पर बहुत वाद–विवाद देखे गए।

कुल मिलाकर हिंदी सिनेमा से जुड़े व्यक्तियों की राजनीतिक अभिव्यक्ति ने व उनसे उत्पन्न मुद्दों ने कही न कही सिनेमा जगत में ध्रुवीकरण की राजनीति का निर्माण किया। जिस कारण हर छोटी–बड़ी सामाजिक व राजनीतिक घटनाओं पर विवाद की स्थितियाँ उत्पन्न होती रही हैं। परिणामस्वरूप आम जन ने हिंदी सिनेमा से जुड़े अधिकतम लोगों और उनके चलचित्रों के प्रति विरोध जताते हुए बहिष्कार का पथ अपनाया है। जो सिनेमा जगत के समक्ष बहुत बड़ी चुनौती है।

♦♦♦♦♦

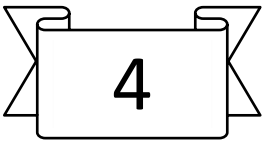

स्त्री अभिव्यक्ति के बदलते परिप्रेक्ष्य और हिंदी सिनेमा

निशांत यादव

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

हिंदी सिनेमा का उदय 1913 में प्रदर्शित पहली मूक फिल्म श्राजा हरिश्चंद्रश से होता है जिसे भारतीय सिनेमा के प्रणेता धुंडिराज गोविंद (दादा साहब) फाल्के ने बनाया था। इस समय भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति ऐसी थी कि पितृसत्तामक समाज महिलाओं को फिल्मों में अभिनय से दूर रहने के लिए विवश करता था। जिस कारण इस दौर की फिल्मों में पुरुष के अतिरिक्त स्त्री चरित्र की भूमिका भी पुरुष कलाकार ही अदा करते थे। किंतु समय के साथ ही 19वीं सदी के चौथे दशक में इस सामाजिक अवधारणा में बदलाव आया और देविका रानी, शोभना समर्थ, जुबैदा, मेहताब, जैसी संपन्न परिवारों से सम्बन्ध रखने वाली महिलाओं ने सिनेमा जगत में प्रवेश किया और इसमें स्त्रियों के सामाजिक महत्व को पुनर्परिभाषित किया। सिनेमा जगत में स्त्री आगमन ने हिंदी सिनेमा और भारतीय समाज का चेहरा ही बदल कर रख दिया।

भारतीय समाज में जैसे–जैसे पुनर्जागरण होता गया वैसे–वैसे फिल्मों के विषय स्त्री–जीवन तथा उसके ईच्छा और आकांक्षाओं से जुड़ते गए। कहना गलत न होगा कि फिल्म उद्योग को स्त्री अस्मिता ने अत्यधिक प्रभावित किया। यह भी कहा जा सकता है कि फिल्मों के स्वरुप तथा उसकी प्रकृति पर भी स्त्री अस्मिता ने प्रभाव डाला। अब अछूत कन्या, जीवन प्रभात, निर्मला, आलम आरा, जरीना, चित्रलेखा, परिणीता जैसी महिला केंद्रित विषयों के साथ हिंदी फिल्मों का निर्माण होने लगा। बकौल फरीद काजमी, हिंदी सिनेमा ने शैशवकाल से ही महिला कामुकता बिम्ब को जागृत किया। परन्तु अनेक स्तरों पर सावधानी और चालाकी बरतता रहा। ऐसा क्यों हुआ इसके लिये हमें उस दौर से अपनी बात शुरू करनी होगी।

हिंदी सिनेमा में 1951 से धीरे–धीरे महिलाओं के प्रति एकांगी दृष्टिकोण में बदलाव दिखाई देता है। यह बदलाव फिल्म आवारा में दिखाई देता है। जिसमें पहली बार किसी पुरुष पात्र का महिला किरदार द्वारा बचाव करते हुए दिखाया जाता है। फिर इसी फिल्म के द्वारा 'स्त्री–कामुकता' को प्रदर्शित करता हुआ गाना हिंदी सिनेमा में पहली बार चित्रित किया गया

आ जाओ मचलते हैं अरमां, अब रात गुजरने वाली है

इसी फिल्म में एक स्विमिंग सीन भी नर्गिस द्वारा किया गया है जो मास्टर विनायक की 1938 फिल्म ब्रम्हचारी की याद दिलाती है। इसके उपरांत श्री–420 में महिलाओं के दो स्वरूप का चित्रण किया गया है। प्रथम का प्रतिनिधित्व विद्या तथा दूसरे का माया द्वारा किया जाता है। जो अब तक सिर्फ पुरुष पात्र को प्रदर्शित करता रहा है। इसके उपरांत मदर इण्डिया द्वारा नारी की क्षमता तथा संवेदनशीलता का चित्रण भारतीय सिनेमा द्वारा किया जाता है परन्तु जहाँ फिल्म के नाम से भारतीय नारी की विशेषता प्रदर्शित होती है। वहीं पूरी फिल्म नर्गिस (राधा) का किरदार दो स्तर पर चलता दिखाई देता है। जहाँ एक तरफ तो वह समाज के सामने बहुत सशक्त है वहीं एक महिला के तौर पर उसकी पहचान उसके पति और पति के बाद बच्चों से प्रदर्शित की जाति है। इतनी सशक्त महिला स्वयं का कोई पहचान न बना पाना भारतीय जनमानस की रुढ़िवादी सोच का ही परिणाम जान पड़ता ह।

"औरत वही औरत जिसे दुनिया की शरम है, संसार में बस लाज ही नारी का धरम है"

यह गीत भारतीय पितृसत्तामक समाज को ही नहीं दर्शाता वरन उनके द्वारा महिलाओं के लिये जो एक प्रतिष्ठा निर्धारित कर दी गयी है उसे भी प्रदर्शित करता है। इसी फिल्म का यह संवाद –

"मैं एक औरत हूँ, एक बेटा दे सकती हूँ, लाज नहीं दे सकती"

यह दिखाता है कि अब महिलाओं ने पुरुषों द्वारा निर्धारित इस नारी प्रतिष्ठा को सहर्ष स्वीकार भी कर लिया है। वक्त की रफ्तार के साथ–साथ हिंदी सिनेमा भी अपनी रफ्तार पकड़ने लगता है। 1960 के दशक में कुछ ऐसी फिल्में भी आयीं जिन्होंने स्त्री–अस्मिता की आवाज बुलंद की, उनका अवलोकन करना आवश्यक होगा। इस क्रम में अगर मुगले–आजम का नाम पहले रखा जाय तो कोई गलत न होगा। इस फिल्म की शुरुआत में ही स्त्री को एक बुत के रूप में प्रदर्शित किया जाता है, बात अगर मुगल सल्तनत की है तो फिर बुत भी ऐसा कि–

"इस मुजस्समा को देखकर सिपाही अपनी तलवार, शहंशाह अपना ताज और इन्सान अपना दिल निकाल देगा"

अभी तक की फिल्मों में हमने स्त्री के विभिन्न रूप देखे थे पर इस फिल्म में स्त्री अपने सभी रूपों से अलग दिखाई जाती है। उसे एक लौंडी (संअम हपतस) के रूप में दिखाया जाता है।

परन्तु स्त्री का जितना सशक्त किरदार इस फिल्म में दिखाई देता है वह किसी भी पूर्ववर्ती फिल्म में देखने को नहीं मिलता है। फिल्म का गीत

"आज कहेंगे दिल का फसाना, जान भी ले ले चाहे जमाना"

एक कनीज द्वारा एक बादशाह के सामने प्रस्तुत करना, शायद समाज में हो रहे तत्कालीन परिवर्तन को प्रदर्शित करता है। फिल्म का संवाद

"ये कनीज शहंशाह जलालुद्दीन मोहम्मद अकबर को अपना खून माफ करती है"

तत्कालीन समाज की कमियों को प्रदर्शित करता है कि परम्पराओं में दंड का निर्धारण करने का अधिकार सिर्फ "संस्था" और "पितृसत्तात्मक" समाज को ही है। इसी दौर में वहीदा रहमान और देवानंद अभिनीत फिल्म "गाईड" ने भी स्त्री स्वतंत्रता को प्रदर्शित किया। इस फिल्म को इसके गीत–

"काँटों से खींच के ये आँचल, तोड़ के बंधन बांधे पायल"

द्वारा ही समझा जा सकता है। इस गीत को हिंदी सिनेमा का प्रथम नारीवादी गीत भी कहा जा सकता है। जिसके द्वारा स्त्री अपनी दशा और दिशा दोनों प्रदर्शित कर रही है। फिर इसी क्रम में इस दौर में कई फिल्में आयीं जैसे– वन्दनी, साहब बीबी और गुलाम, मिर्च–मसाला आदि। इन फिल्मों ने स्त्री की समस्या, इच्छा तथा मर्यादा को अपने–अपने ढंग से प्रदर्शित किया। यदि साठ का दशक सेक्स सेन्टर स्टेज का रहा तो सत्तर के दशक में विचारों, अभिव्यक्ति और का एक खुलापन आया जिसे दर्शकों ने उत्सुकतापूर्वक ग्रहण किया। इससे पूर्व दर्शकों को फीमेल बॉडी का विसुअल सेलिब्रेसन इस तरह से नहीं देखने को मिला था। इस दौर में राजकपूर ने मेरा नाम जोकर से लेकर राम तेरी गंगा मैली तक हॉलीवुड निर्देशकों से सलाह लेकर कई अद्‌भुत प्रयोग किये।

इससे जहाँ दर्शकों को नया अंदाज देखने को मिला। वहीँ स्त्री अब रोटी, कपड़ा के अधिकार से निकलकर पुरुष के साथ स्वतंत्रतापूर्वक अपनी इच्छाओं का इजहार करने लगीं। भारतीय महिलाओं की आवाज को इस दौर में सिनेमा में प्रदर्शित करने के लिए परवीन बाबी, जीनत अमान, सिम्मी ग्रेवाल, हेलेन जैसी अभिनेत्रियाँ आयीं। इन अभिनेत्रियों ने अपने सौन्दर्य तथा अभिनय से सत्तर के दशक के सिनेमा को नई पहचान दिलाई, जो अब तक रुढ़िवादी फिल्मों से घिरा हुआ था। इसी दौर की फिल्म "बाबी" ने तो 21वीं सदी की लड़की की रुपरेखा खींच दी

जोकि मिनी स्कर्ट और पैंट पहनती है तथा बिना शादी किये हुए लिव–इन जैसे सम्बन्धों में रहती है। इस फिल्म ने भारतीय हिंदी सिनेमा के लिये एक नया दौर ही शुरू कर दिया।

सत्तर के दशक में सेक्स (लिंग) फिल्मों का केंद्र बिंदु था जिसको अस्सी के दशक में विस्तार प्रदान किया गया। राज कपूर ने राम तेरी गंगा मैली द्वारा शादी के पूर्व व शादी के पश्चात् के स्त्री जीवन को प्रदर्शित कर एक नई शुरुआत की जो मासूम, सिलसिला, इंसाफ का तराजू, जख्मी औरत, प्रतिघात आदि फिल्मों तक जरी रहा। यह बदलाव सिर्फ हिंदी सिनेमा में ही नहीं वरन भारतीय समाज में भी साथ–साथ परिलक्षित हो रहे थे। यही कारण था कि इन फिल्मों का दर्शक वर्ग दिन–ब–दिन बढ़ता जा रहा था।

नब्बे के दशक में भूमंडलीकरण ने हिंदी सिनेमा को और व्यापकता प्रदान की। इस दौर में पूर्ववर्ती दशकों की भांति विधिक रूप से विवाह के तौर पर सेक्स की मांग लगभग–लगभग समाप्त हो गयी थी। अब हिंदी सिनेमा में एक नया बिंदु "सवअम" उभरा। जिसने समृद्ध होते मध्य युग की फंतासी को साकार जसा कर दिया। दिलवाले दुल्हनिया ले जायेंगे, हम आपके हैं कौन, दिल तो पागल है, कुछ–कुछ होता है, परदेस आदि फिल्मों ने स्त्री को एक नए अवतार "प्रेमिका" के रूप में प्रदर्शित करना शुरू कर दिया। लेकिन इतने दशकों के बदलाव भी स्त्री की स्थिति को मूल रूप से कभी भी बदल नहीं पाए। नब्बे के इस दशक में भी स्त्री से ही बलिदान की अपेक्षा की जाती रही है। जिसको हम 'दिलवाले दुल्हनियां ले जायेंगे' और 'हम आपके हैं कौन' में स्पष्ट तौर पर देख सकते हैं।

नब्बे के दशक में थियेटर भले ही मल्टीप्लेक्स में बदल गए हों परन्तु स्त्री के लिये परंपरा, मर्यादा, ऊँच–नीच, त्याग आदि की अवधारणा नहीं बदली। बल्कि इन्हें अब एक नए अंदाज में परोसा गया और सभी अवधारणायें स्त्री को पैमाना मानकर बनाई गयीं। इस दौर में महिलाओं की भूमिका को हिंदी सिनेमा में मुख्यतः काजोल, माधुरी दीक्षित, श्री देवी, रवीना टंडन, मनीषा कोइराला आदि अभिनेत्रियों द्वारा प्रदर्शित किया गया।

वर्तमान दौर का सिनेमा, अब तक के दौर का सबसे सशक्त हिंदी सिनेमा है जिसमें महिलाओं के मुद्दों को लेकर फिल्में बनी भीं और सफल भी रहीं। अभी तक हिंदी सिनेमा में सिर्फ महिलाओं की उपस्थिति पर प्रकाश डाला जाता था, लेकिन इस दशक में महिलाओं के आंतरिक जीवन पर प्रकाश डालने वाली फिल्मों का चलन प्रारंभ हुआ। इसकी शुरुआत 2002 में बिपासा बासु अभिनीत फिल्म "जिस्म" से होती है जो आगे 2004 में मल्लिका सहरावत अभिनीत "मर्डर",

प्रियंका चोपड़ा और करीना कपूर अभिनीत "एतराज", 2006 में प्रीती जिंटा अभिनीत "सलाम नमस्ते".....इसके उपरांत लज्जा, जुबैदा, अस्तित्व, मर्डर–2, बी.ए. पास, हेट स्टोरी, कहानी, इंग्लिश–विन्ग्लिश, हिरोइन, मर्दानी, गुलाब गैंग, हाईवे, क्वीन और तत्कालीन प्रदर्शित फिल्म एंग्री इंडियन गाडेस तक निरंतर जारी है।

अभी तक जिस हिंदी सिनेमा में महिला का अंग–प्रदर्शन बुरा तथा फूहड़ माना जाता था, उसी हिंदी सिनेमा में आज सनी लियोन जैसी पोर्न–स्टार सफल हिंदी फिल्म दे रही हैं। जिससे यह प्रदर्शित होता है कि आम जनमानस पर सिनेमा का प्रभाव आज कहीं अधिक व्यापक है और यह जनमानस किसी एक ही पितृसत्ता जैसे विचार और परम्परा में नहीं जकड़ा रह सकता है। यही कारण है कि वर्तमान समय में हिंदी सिनेमा द्वारा समाज के सभी अंगों एवं स्त्री स्वाधीनता के सभी पहलुओं पर प्रकाश डालती फिल्में प्रदर्शित की जा रही हैं।

♦♦♦♦♦

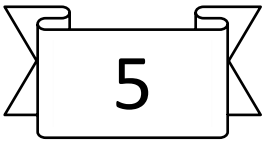

5

सिनेमा और राजनीतिः संवैधानिक सुसंगतता

डॉ० कु० आरती

विधि विभाग, हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल केन्द्रीय विश्वविद्यालय, उत्तराखण्ड

सिनेमा और राजनिति दोनो सबल एवं समृद्व लोकतन्त्र का आधारस्तम्भ है, और लोकतन्त्र भारतीय संविधान की आत्मा। जहां सिनेमा ने वाक एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता को एक नया आयाम प्रदान किया वही प्रतिनिधित्व सरकार की अवधारणा को, राजनिति ने सुदृढ़ बनाया। प्रत्येक व्यक्ति को मनोरंजन एवं स्वतन्त्रता के साथ– साथ अपने मनपसंदीदा प्रतिनिधि चुनने का अधिकार, सिनेमा और राजनिति ने बखूबी स्तर पर दिया। सिनेमा का उदभव वास्तविक, सत्य, पौराणिक, सहित्यक सूचना का संचरण करने की दृश्टि से हुआ। सिनेमा बहुत स्तर तक कामयाब भी रहा, 19वी सदी में चलचित्र, नाटक, ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित चलचित्र ने सिनेमा को एक नवीन मुकाम प्रदान किया। वर्तमान सिनेमा केवल कोरी कल्पना एवं क्षणिक मनोरंजन का साधन बनकर रह गया है। मानवता से परे कार्य होने पर किसी भी संस्थान का महत्व घटने लगता है।

राजनीति एक ऐसा ताना बाना है जो हर क्षेत्र को प्रभावित करता है और उनसे प्रभावित होता है निःसन्देह, राजनिति अपने आप में अत्यन्त मजबूत कड़ी है यदि वह उच्च आदर्ष से परिपूर्ण हो जैसे, पारदर्षिता, खुली प्रतिष्पर्धा, लोक कार्य निभाने की कला इत्यादि। वाद विवाद एवं निर्णय निर्माण की प्रकिया राजनीति का अहम् हिस्सा है। समस्त विधि निर्माण राजनीतिक बहस के माध्यम से अस्तित्व में आते हैं अतः षासन संचालन एवं न्याय पषासन को गति प्रदान करने में राजनीति का महत्वपूर्ण स्थान होता है। परन्तु इन्हें अपने समस्त व्यवहार का कार्यान्वयन संविधान की गरिमा को ध्यान में रखते हुए करना होता है क्योकि संविधान के दायरे में रहते हुए प्रत्येक कार्यकम एवं षक्तियों का प्रयोग स्वतः वैध एवं सार्थक होता है। कुछ राजनितिज्ञ ऐसे रहे है जिनका योगदान देष कभी भुला नहीं सकता है जैसे– डा0 बी0 आर0 अम्बेडकर, पं0 जवाहरलाल नेहरू, डा0 राजेन्द्र प्रसाद, जयप्रकाष नारायन, श्रीमती इन्दिरा गांधी, सरदार बल्लभ भाई पटेल इत्यादि। आज देष आदर्ष एवं महत्वाकांक्षा स वषीभूत राजनायक की मांग कर रहा है जो भारतीय लोकतन्त्र को एक नयी दिषा दे सके।

भारतीय संविधान सर्वोच्च व्यक्तित्व एवं आकांक्षा के निर्माण एवं प्रर्वतन के लिए मार्गदर्षक है। जिसके अन्तर्गत इन्द्रधनुशी न्याय, समावेसी समानता की सुगंध है, समस्त के विकास एवं प्रगति को गणित है। राजनीति एक ऐसी विचारधारा एवं कियाकलाप है जो उपरोक्त लक्ष्य को भेद कर लोकतन्त्र की आभा को प्रजवलित कर सकता है। यह श्रेश्ठ राजनीति के व्यक्तित्व का चित्रण है जिसे अपनाना नये युग का प्रारम्भ कहा जा सकता है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना तीन प्रकार के न्याय की आवाहन करता है, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीजिक न्याय। यहां आज राजनीजिक न्याय का तात्पर्य निर्णय निर्माण में महिलाओं की सहभागिता को सुनिष्चित करना। उपरोक्त सभी न्याय केवल उत्तरदायित्व की संकल्पना को मस्तिश्क में रखकर एवं स्थापित करके प्राप्त किया जा सकता है। संविधान के द्धारा निश्पक्ष राजनीति का समर्थन किया गया हैं। जो परिकल्पित एवं संवैधानिक लोकतन्त्र की नींव को मजबूती प्रदान करें।

राजनिति का दायरा सीमित एवं स्वार्थमयी होता जा रहा है जो समस्त विधिक, सामाजिक व्यवस्था को छलनी करने एवं बिखेरने की ताकत रखता है। राजनीतिज्ञ या राजनीति में संलग्न व्यक्ति जनता के हृदय के अत्यन्त निकट होते है, उनकी समस्यों को करीब से समझते एवं अवगत होते है। अतः इनका कत्तर्ब्य बनता है कि जनता की समस्या का समाधान राश्ट्रीय एवं व्यक्तिगत दोनों स्तर पर करने का प्रयासरत रहें। राजनीति का षाब्दिक अर्थ देखे तो यह है कि षासन करने को कला। यह तब सम्भव है, जब लोकहित बिना व्यक्गित स्वार्थ के किया जाय। पष्चिमी विद्ववान प्लेटो का मानना था कि षासक को सदैव जनताहित में कार्य करना चाहिए तभी आदर्ष राज्य की स्थापना का सपना पूरा किया जा सकता है।

सिनेमा को भारतीय संविधान के अनुच्छेद् 19(1)(क) के अन्तर्गत संरक्षण प्रदान किया गया है। परन्तु यह संरक्षण पूर्ण नहीं है, अनुच्छेद् 19(2) के अधीन निर्धारित निर्बन्धन में रहते हुए सिनेमा अपने कार्यकम का संचालन करने का अधिकार है। निर्बन्धन युक्तियुक्त है या नहीं इसका निर्धारण भारतीय न्यायपालिका सौंपा गया है। निर्बन्धन के अन्तर्गत मुख्य विशय देष की सुरक्षा, सम्प्रभुता, अखण्डता, लोक व्यवस्था, षिश्टाचार एवं नैतिकता, मानहानि, आादि रखे गये है। सिनेमा का प्रभाव समाज के प्रत्येक क्षेत्र पर पड़ना स्वभाविक है, क्योकि चलचित्र व्यक्ति के मस्तिश्क पर प्रत्यक्ष एवं सीधा असर डालते है। सिनेमा द्धारा संचालित अनेक चलचित्र ने भारतीय समाज की व्यवस्था, प्रणाली, कुरुतियों एवं कमजोरियों से समाज को अवगत कराया है। मदर इन्डिया, मंथन, ब्लैक फइडे, तारे जमीं पर, थ्री इडीयय, रंग दे बसंती, चक दे इन्डिया, इत्यादि

चलचित्रों ने समाज को व्यथा को बड़े वास्तविक ढ़ग से समाज के सम्मुख रखा है। अतः सिनेमा का महत्व अत्यन्त सराहनीय रहा है।

यह समाज की संस्कृति एवं सभ्यता को संजोने एवं बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। हर वर्ग के लोगो को समानता एवं न्याय का पाठ पढ़ा सकता है। यही कारण है कि सिनेमा का निधारित उत्तरदायित्व है कि वह समाज को एक नयी राह सृजित करे जो एकजुटता, विकास एवं न्याय की मंज़िल तक पहुँचने में सहायक सिद्ध हो। आवष्यकता इस बात की है कि सिनेमा के नये आचार निर्धारित किये जाये। आचार व्यवहार प्रत्येक क्षेत्र की सीमा निर्धारित करते है सीमा निर्धारण षक्ति एवं उत्तरदायित्व को विनियमित करने में सहायक होते है। सभ्य समाज सीमाओं में रह कर कार्य करने पर बल देता है तथा विधि के षासन की संकल्पना को पूरा करने में सहायता मिलती है, और विधि का षासन सामाजिक न्याय की प्रतिस्थापना करने का सबसे सुगम एवं प्रभावी साधन है। संविधान के पांच आदर्ष सम्प्रभुता, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, लोकतन्त्र, एवं गणराज्य को सफलता स्वच्छ एवं स्वस्थ राजनीति पर निर्भर करती है।

वर्तमान समय में सिनेमा एवं राजनीति का व्यवहार अत्यन्त दुखःद रहा है। सिनेमा का नैतिकता एवं षिश्टाचार से परे अवांछित आधुनिकता का समावेष उचित एवं न्यायसंगत नहीं है। वही राजनितिक प्रभाव एवं हस्तक्षेप हर स्तर पर मनमानेपन को बढ़ावा देता है जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 के अन्तर्गत मान्य नहीं है। मनमानापन संविधान की आत्मा को ध्वस्त करता है। समानता, मानव अधिकारों की स्थापना का प्रथम कदम और अन्य अधिकारों की सहयोगी एवं पोशणकर्त्ता है। यही कारण है कि अनुच्छेद 14 को भारतीय न्यायपालिका ने संविधान का आधारभूत ढ़ॉचा माना है और किसी भी प्रकार के मनमानेपन को प्रतिबन्धित किया है, केवल युक्तियुक्त वर्गीकरण को मान्यता प्रदान किया गया है साथ ही साथ विवेकाधिकार को मर्यादित कर समस्त प्रद्यिकारियों को उनकी जिम्मेदारियों का एहसास करता है।

अन्ततोगत्वा यह सत्य है कि सुदृढ़, सबल एवं पारदर्षी राजनीति किसी भी देष एवं षासन व्यवस्था को समृद्धि करने के साथ ही साथ सम्पूर्ण समस्या का समाधान करने में भी सार्थक साबित हो सकती है। राजनीति भी कर्तब्यनिश्ठा, संवेदना, मानवता एवं तत्परता की मांग करता है तभी वह अपने निर्धारित संवैधानिक लक्ष्य को पूर्ण कर सकेगा। जहां तक सिनेमा के दायित्व एवं कर्तव्य की बात है उसे कम नहीं आका जा सकता है क्योंकि सिनेमा सूचना प्रदान करने का प्रबल माध्यम है हमारी विरासत से हमें अवगत कराना, षौर्य से लबरेज चलचित्र से जनता के मन में राश्ट्रीयता की भावना का द्धीप प्रज्जवलित करना सिनेमा के महत्व को दर्षित करता है। अतः

वर्तमान समय पुनःअवलोकन की अवष्यकता महसूस कर रहा है चाह वह सिनेमा हो या राजनीति। अवलोकन इस तथ्य का, कि क्या सिनेमा अपने निर्धारित लक्ष्य को पूरा करने में सफल हुआ? क्या सिनेमा के उत्तरदायित्व में नैतिकता समाहित नहीं है ?क्या आधुनिकता नैतिकता एवं षिश्टाचार की विरोधी है? क्या राजनीति अपने आचार एवं सिद्धान्तों का पालन करने में असमर्थ रही है? क्या राजनीति का पर्याय केवल जनता पर षासन करना है? क्या संविधान के आदर्षो को पूर्ण करना राजनीति के कर्तब्य में समाहित नहीं हैं इत्यादि। अब उपरोक्त तथ्यों पर चिन्तन अपरिहार्य हैं। इस लेख कार्य को पूर्ण करने में मेरे आदर्णीय गुरू डॉ0 अषोक कुमार पाण्डेय का योगदान सराहनीय रहा है।

♦♦♦♦♦

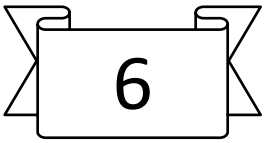

6

सिनेमा, राजनीति एवं शिक्षा एक जटिल रिश्ता

अनिल कांबोज

महानिरीक्षक बीएसएफ (सेवानिवृत्त), प्रोफेसर, एन.डी.आई.एम.

डॉ० रितु तलवार

प्रोफेसर, एन.डी.आई.एम.

यह ठीक ही कहा गया है कि सिनेमा संशोधन, बातचीत, पूर्वाभ्यास और परिवर्तन को लागू करने के लिए एक उपकरण के रूप में काम कर सकते हैं। हो सकता है कि सिनेमा अपने आप में क्रांतिकारी न हो, लेकिन क्रांति के लिए यह निश्चित रूप से पूर्वाभ्यास है। कला के रूप में किनिमा, ''राजनीतिक कार्रवाही'' की तरह मानसिक निर्माण करने की शक्ति रखती है। सिनेमा के जन्म के बाद से, यह महसूस किया गया है कि सिनेमा में समाज को प्रभावित करने और निर्देशित करने की शक्ति है, इसे अक्सर कई देशों में सत्ता में पार्टियों द्वारा प्रचार उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया गया है। सिनेमा, जिसे समाज को प्रभावित करने और निर्देशित करने के अलावा एक लड़ाई के क्षेत्र के रूप में देखा जाता है, यह एक उपकरण है जो देशों के बीच सांस्कृतिक संपर्क को प्रभावित करता है।

सिनेमा, जिसका उपयोग एक क्षेत्र के रूप में किया जाता है, जहां मौज्दा सामाजिक और राजनीतिक स्थितियां और प्रतिनिधित्व शैलियों के बीच संघर्ष को पुनरू प्रस्तुत किया जाता है, को एक ऐसे क्षेत्र के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है, जहां उस समय का राजनीतिक प्रवचन हस्तांतरित होता है। नीति एक गतिविधि है, जो लोगों के जीवन स निकटता से संबंधित है और उन्हें प्रभावित करती है। लोगों को उनका प्रतिनिधित्व करने और नेतृत्व करने के लिए एक नेता की आवश्यकता है क्योंकि उनका मानना है कि ये नेता अपने जीवन में बेहतर परिस्थितियों तक पहुंच प्रदान करेंगे।

नेताओं के लिए सिनेमा को एक प्रभावी खिलौना के रूप में माना जा सकता है। सिनेमा वैचारिक दृष्टि से उत्पादन का एक अनिवार्य साधन हैय सिनेमा एक राजनीतिक उपकरण के रूप में, दैनिक जीवन में अर्थ और सामाजिक, ऐतिहासिक और राजनीतिक का प्रतिनिधित्व करने का

प्रयास करता है जिसमें यह मौजूद है। यह सिनेमाई विचारधारा, सामाजिक परिस्थितियों और ऐतिहासिक परिवर्तन के प्रभाव में अवधि के प्रभाव को दर्शाता है। सिनेमा, जो राजनीतिक है, का अर्थ है कि राजनीतिक विषयों या घटनाओं और घटनाओं पर राजनीतिक रूप से चर्चा की जाएगी।

राजनीतिक फिल्म आज, एक फिल्म का मतलब है, जो किसी और के बजाय खुद को डालती हैय परिवर्तन शैली द्वारा शब्दों, ध्वनियों, छवियों, आंदोलनों और भावनाओं के बीच की दूरी को दर्शाता है। इस प्रकार, सिनेमा में कई राजनीतिक प्रवचन होते हैं और एक व्यक्ति के जीवन पर एक राजनीतिक भावना भी पैदा की जा सकती है। फिल्में सामाजिक वास्तविकता के लिए किसी भी तरह से निर्मित होने के लिए जमीन तैयार करती हैं, और सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व प्रणाली का हिस्सा हैं जो दुनिया की भावना के संदर्भ में सामाजिक संस्थानों को बनाए रखती है। यहां तक कि फिल्में, जो राजनीतिक फिल्मों को श्रेणी में नहीं हैं, राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों की अवधि का संदर्भ देती हैं।

जर्मन फिल्म उद्योग का नाजी वर्चस्व फासीवादी राष्ट्रीय कार्यक्रम को संरक्षित करने के लिए फिल्मों के उपयोग का सर्वोच्च उदाहरण है। नतीजतन, बॉलीवुड की दो फिल्में, ''द एक्सीडेंटल प्राइम मिनिस्टर'' और ''उरीरू द सर्जिकल स्ट्राइक'', एक तीसरी फिल्म, ''पीएम नरेंद्र मोदी'' के ट्रेलर के साथ रिलीज हुई। सिनेमा को प्रचार के एक उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है क्योंकि जनता के बीच इसकी व्यापक पहुंच है। फिल्में एक महत्वपूर्ण भाग के रूप में महत्व प्राप्त कर रही हैं। उन्हें ऐसे एजेंट के रूप में देखा जा रहा है जो राष्ट्र की लोकतांत्रिक व्यवस्था को प्रभावित कर सकते हैं। राजनीतिक उम्मीदवारों के रूप में फिल्मी सितारों के प्रवेश का पता 1960 के दशक में लगाया जा सकता है, जब हिंदी फिल्म उद्योग के पृथ्वीराज कपूर ने संसद मं राज्यसभा के सदस्य के रूप में पहली प्रविष्टि की। यह उन अभिनेताओं की बढ़ती संख्या का समर्थन करता है जो राजनीति में प्रवेश कर रहे हैं और बदले में, अपनी राजनीतिक पार्टी के घोषणापत्र के अनुरूप फिल्में बनाकर अपने राजनीतिक दल के बयानों की सहायता कर रहे हैं।

भारत में, भारतीय संस्कृति में फिल्म उद्योग की प्रमुख उपस्थिति है। फिल्म स्टार्स के सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसे इंस्टाग्राम, ट्विटर आदि पर लाखों फॉलोअर्स हैं, जहाँ उनकी राय अक्सर उनके प्रशंसकों द्वारा पुनः साझा या दोहराई जाती है। इसके अलावा, भारतीय आबादी के लिए, 'हीरो' और 'अभिनेता' शब्दों को समानार्थक शब्द माना जाता है, जो कई लोगों की प्रशंसा को

दर्शाता है कि कई लोग फिल्म सितारों की ओर हैं। कुछ मामलों में, कई प्रमुख अभिनेताओं को मंदिरों में जगह मिली है, जहां वे अपने प्रशंसकों द्वारा मूर्ति और पूजा करते हैं।

शिक्षा, सिनेमा और राजनीति के बीच संबंध एक जटिल विषय है। पीढ़ी से पीढ़ी तक की परिस्थितियों के अनुसार राष्ट्र के सांस्कृतिक, भौतिक और नैतिक मूल्यों को स्थानांतरित करने के माध्यम के रूप में शिक्षा एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एक राष्ट्र का अस्तित्व, दुनिया और उसके सांस्कृतिक मूल्यों के साथ अपने संबंधों को बनाए रखना, और जागरूक व्यक्तियों को शिक्षित करना शिक्षा और शिक्षा नीतियों पर निर्भर करता है। इसलिए, शिक्षा एक महत्वपूर्ण अवधारणा है जो प्रत्येक क्षेत्र की कार्यक्षमता को बनाए रखती है और पारस्परिक संपर्क भी प्रदान करती है।

एक महत्वपूर्ण संस्थान के रूप में जो सामाजिक संरचना का आधार बनता है, शिक्षा अन्य संस्थानों के साथ बातचीत करती है और सामाजिक एकीकरण प्रदान करती है। यह कक्षा में सिनेमा की शक्ति की संचार भूमिका के संबंध में शिक्षकों की क्षमता का परिचय देता है। राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक–आर्थिक और सामाजिक–सांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुसार व्यक्तियों को शिक्षित करना संभव है, लेकिन केवल अगर शैक्षणिक संस्थान अन्य संस्थानों के साथ अपनी बातचीत को ठीक से जारी रखते हैं। शिक्षा से संबंधित राजनीति इस अध्ययन में समाज और सामाजिक संस्थानों पर राजनीतिज्ञों के शिक्षा के स्तर के प्रभावों की व्याख्या पर आधारित है। इस मामले में, जब राजनीति पर चर्चा की जाती है तो जागरूक और प्रभावी चयन और चुने जाने का कार्य शिक्षा के साथ एक–से–एक संबंध में होता है

बहुत सारे लोग ऐसे हैं जो राजनीतिक व्यवस्था को नहीं समझते हैं। यह अच्छा है कि फिल्म उद्योग राजनीति के बारे में छापें देता है, जिसका उद्देश्य ऐसे लोगों को समझना और प्रदान करना है जो समझ नहीं पाते हैं और राजनीति के लिए अभी तक स्पष्ट नहीं हैं। सिनेमा राजनीतिक लामबंदी के लिए एक शक्तिशाली उपकरण हो सकता है, और मतदाताओं के साथ अप्रत्यक्ष रूप से संवाद करने और उन्हें एक निश्चित तरीके से मतदान करने के लिए प्रभावित कर सकता है। इसलिए, राजनीतिक फिल्में और अभिनेताओं की राजनीतिक संबद्धता एक राजनीतिक पार्टी के लिए वोट आकर्षित करने के लिए काफी महत्वपूर्ण हो सकती है।

अंत में, सिनेमा को प्रचार के एक उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है क्योंकि जनता के बीच इसकी व्यापक पहुंच है। फिल्में एक महत्वपूर्ण भाग के रूप में महत्व प्राप्त कर

रही हैं। उन्हें ऐसे एजेंट के रूप में देखा जा रहा है जो राष्ट्र की लोकतांत्रिक व्यवस्था को प्रभावित कर सकते हैं। राजनीति और सिनेमा के बीच का संबंध कुलीन राज्यों के साथ और अधिक धुंधला हो गया है, जो 21 वीं सदी में भी अपने राष्ट्र के फिल्म उद्योगों पर निरंकुश और लोहे का नियंत्रण बनाए हुए है।

♦♦♦♦♦

7

बॉलीवुड के गुड्डे–गुड़िया की पुड़िया का ऐतिहासिक विश्लेषण

रजनी

शोधार्थी, राजनीति विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

बॉलीवुड की नगरी सिमेंट, गारे, ईट से ही नहीं बनी है अपितु इसके निर्माण और विकास के साथ इसका अमीरपना भी बना है और उसका साधन है मात्र अफीम। यह बात वर्तमान की ही नहीं अपितु यह कार्य 17वीं, 18वीं, 19वीं, से चलता आ रहा है। और इस अफीम से मुम्बई ही नहीं अपितु संपूर्ण भारत के पश्चिमी तट अमीर बन गए। इसका प्रारंभ चीन को कपास बेंचकर लाभ कमाने से हुआ परंतु बात बनी नहीं फिर आई अफीम जिसने इस कार्य को पूर्ण करने में भरपूर भूमिका निभाई और उस समय मुम्बई तब बॉम्बे के नाम से प्रसिद्ध था। जिसका संबंध ब्रिटिश हुकुमत से रहा है। 1661 में ब्रिटेन के चार्ल्स द्वितीय का विवाह पुर्तगाल की केथरिन ब्रिगेन्ज़ा से होता है जिसमें दहेज में ब्रिटिश राज परिवार को मुम्बई मिल जाता है। जिसे 4 साल बाद अर्थात् 1665 में इस शहर को ईस्ट इंडिया कंपनी को किराए पर दे दिया जाता है, जिसका किराया था पूरे वर्ष का 10 पाउंड। परंतु समय के चलते शहर की देख–रेख ईस्ट इंडिया कंपनी को भारी पड़ने लगती है जिसक परिणामस्वरूप बिहार, बनारस के राजस्व का बड़ हिस्सा अब मुम्बई पर खर्च होने लगता है। 1788 तक लार्ड कार्नवालिस के द्वारा यह घोषणा कर दी गई की बोम्बे का दर्जा घटा दिया जाए। बॉम्बे शहर का दर्जा अब फैक्ट्री का दर्जा कर दिया जाए। 18वीं शताब्दी के समाप्त होते–होते किसी को भी इस बात का अंशका नहीं थी कि बॉम्बे से यह मुम्बई बनकर पैसो का पॉवर हाउस बन जाएगा।

शहर में लोग जोखिम उठा रहे थे अपनी किस्मत आजमा रहे थे, आज भी मुंबई की हवा में यह जज्बा देखने को मिलता है तो उनके बांम्बे को प्रतिक्षा थी अफीम की, वो अफीम जो अफीम से पैसा पैदा करता है और पैसे से नशा पैदा करता है। इतिहास को देखा जाए तो लंबे समय तक ईस्ट इंडिया कंपनी बिहार से अफीम लेकर इंडोनेशिया भेजा करती थी जिसे ब्लैक कहा जाता है। 1670 से लेकर 1740 तक बिहार की अफीम से ईस्ट इंडिया कंपनी राजा बन गई। इनका अब बिहार से लेकर बनारस की अफीम पर कब्जा हो गया और 1773 तक आते–आते अफीम के कारोबार को अपने नियंत्रण में ले लिया ।

अफीम के कारोबार से प्राइवेट पार्टियों को बाहर कर दिया गया जिसके बाद अफीम के कारोबार का दूसरा रास्ता खुल गया। भारत के पश्चिमी और दमन द्वीप, गोवा और मुंबई के बंदरगाह से अफीम से भरे जहाज मकाऊ भेजे जाने लगे, वहां बैठे लोगो द्वारा अब इसकी स्मगलिंग होने लगे। स्मग्लिंग अर्थात् जहां सरकार की मान्यता प्राप्त न हो। इसी प्रकार बंगाल में ईस्ट इंडिया कंपनी से निकलकर लोग अपना पैसा बनाने लगे जा आदमी की जान है और मुंबई को मालवा में पैदा होने वाली अफीम मिल जाती है। इसी प्रकार इस प्रकिया ने अपनी गति ऐसी पकड़ी की इस गति से गतिरोध उत्पन्न होने लगा। उसी मुम्बई में जिसे अमीरो की जान, शान कहा जाता है और यह जान, शान बॉलिवुड की आन रही है जा कुछ समय से खतरे में दिखती प्रतीत हो रही है। जिसने कुछ घटनाओं के कारण इस गति को अवरूद्ध कर दिया है। जिसमें सबसे बड़ा प्रथम विषय मर्डर मिस्ट्री या आत्महत्या रहा है तो वहीं दूसरा पैसे की शक्ति के कारण नायिकाओं का बॉलिवुड की इंडस्ट्री से गायब हो जाना रहा हो या डोन से उनका संबंध रहा हो– उदाहरणस्वरूप राम तेरी गंगा मैली हो गई कि नायिका मंदाकिनी। इसी प्रकार इस इंडस्ट्री में होने वाली बढ़ती घटनाओं ने समकालीन समय की परिस्थितियां को ही संपूर्णरूप से बदल दिया है।

परिस्थितियों के बदलते स्वरूप को जया बच्चन के बयान के द्वारा स्पष्ट देखा जा सकता है जो की अभी हाल ही में संसद में खड़े होकर दिया ''कि जिस थाली में खाते है उसी में छेद करते है'' इस बयान के पीछे का कारण उनका रूष्ठ होना है जिसके पीछे भी एक कारण है और वो है– ड्रग्स और बॉलीवुड का विषय उठना, इस प्रकार की सोच के कारण सुशांत सिंह जैसे कई प्रतिभावन कलाकारों को या तो काम मिलना बंद हो जाता है या फिर कम हो जाता है जिसके चलते कई कलाकारों को आत्महत्या जैसे राह की ओर जाते देखा जाता है– उहारणस्वरूप जिया खान 2013, सुशांत सिंह 2020, प्रत्युषा बनर्जी 2016, गुरू दत्त 1964, प्रेक्षा मेंहता 2020, कौशल पंजाबी 2019, साई प्रशांत 2016, शिखा जोशी 2015, रंगनाथ 2015, श्री नाथ 2010, संतोष जोगी 2010, कुणाल सिंह 2008, मयूरी 2005, सिल्क स्मिथा 1996, मोनल नवल 2002, इत्यादि अनगिनत कलाकार इस सूची में शामिल है।

परंतु जया प्रदा की प्रतिकिया इस बयान के विपरित देखने को मिली जिसपर उन्होंने कहा कि ''कहीं न कहीं हम लोगो को ड्रग्स के विरूद्ध आवाज उठानी चाहिए, इसे रोकना बहुत आवश्यक है, और इस प्रकार के विषयों में किसी भी प्रकार की कोई राजनीति नहीं होनी चाहिए, इंडस्ट्री किसी एक की थाली नहीं यह सभी के लिए है, इंडस्ट्री का कमा कर सरकार को देना इस

प्रकार के बनान देना गलत है यह कोई चैरिटी नहीं है, और इन सब को रोकने के लिए प्रारंभ अपने घरों से ही होना चाहिए।'' यहां दोनो एक ही इंडस्ट्री से है फिर भी दोनो की राय भिन्न है। परंतु जया बच्चन के बयान से महाराष्ट्र की शिव सेना अति प्रसन्न दिखाई दी। जिससे स्पष्ट देखा जा सकता है कि मुम्बई की सरकार का बॉलिवुड से संबंध किस प्रकार के है। वहीं दूसरी ओर परिवारवाद की बात पर बल दिया जाए तो हमेशा चर्चा का विषय रहने वाले खान परिवार अर्थात–सलमानखान, शाहरूखान और आमिरखान यह तीनों खानों के साथ–साथ अमिताभ बच्चन इस विषय पर चुप्पी साधे हुए है।

वहीं कामुकता के बाजार की ओर रूख करते हुए कंगना रनौत ने लिखा कि ''जो थाली उन्हे मिली थी उसमें केवल 2 मिनट के रोल, आइटम नम्बर सोंग और एक रोमेंन्टिक सीन थे जोकि नायक के साथ सोने के बाद मिलता था। छोटी–छोटी भूमिका के लिए पुरूषों के साथ संबंध बनाने पड़ते है। इस प्रकार के कास्टिंग काउच का आरोप बॉलीवुड पर लगाया गया है जिस पर शक्ति कपूर और अमन वर्मा जैसे नायको पर यह आरोप सत्य सिद्ध हुए थे, और तब बॉलीवुड के प्रसिद्ध कलाकार एक हो गए और कहा कि ये बालीवुड को बदनाम करने की साजिश है और आज भी इसके विरूद्ध न होकर इसके बचाव में खड़ें होने को तत्पर है। इस बात से स्पष्ट होता है कि बॉलीवुड पर केवल कुछ ही लोगो का मालीकाना हक है। जिसके कारण यह बाहर के किसी भी व्यक्ति को प्रवेश नहीं होने देते और ऐसा होता भी तो वह अधिक दिन तक टिक नहीं पाता, उदाहरणस्वरूप सुशांत सिंह राजपूत, जिया खान, प्रत्युषा बनर्जी इत्यादि जैसे घातक परिणाम देखेने को मिलते है।

समकालीन युग के आते–आते बॉलीवुड पर लगने वाले आरोपो की संख्या में वृद्धि ही हुई जो इस प्रकार है–

- परिवारवाद
- नशाखोरी अंडरवर्ल्ड से मित्रता
- फिल्मों में ब्लैकमनी
- कास्टिंग काउच
- प्रतिभा का दमन
- गुटबाजी
- साहित्यिक चोरी– गाना, डायलॉग इत्यादि चोरी कर लेना

इन सबके बारे मे ज्ञात सबको है परंतु कोई बोलता नहीं। वहीं जब ''हेश टू मी टू'' का केंपेंन चला था तब भी कई बड़े नेताओं के नाम सामने आए थे जिनमें कई डायरेक्टर शामिल दिखे। वही अंडरवर्ल्ड से मित्रता का संबंध का आरोप काफी पुराना है, दाउद अब्राहिम की पार्टी में बड़े–बड़े सुपरस्टार नाचा करते थे जिसे अब कम ही देखा जाता है, पर आज भी डी–कंपनी का धन, बॉलीवुड में लगने के आरोप है। दरअसल बड़े स्टार का जादू अब बॉलीवुड के बड़े बजट वाली बॉक्स ऑफिस पर कम होता दिख रहा है। 2017 में बड़े स्टार का बॉक्स ऑफिस पर टिकट कलेक्शन 24 करोड़ था जो कि अब मान 18 करोड़ रह गया है। कहते है फिल्में समाज का आईना होती है जो दिखाया जाता है वही समाज में हो रहा होता है, जो समाज के मुद्धो के बारे में बताती थी। स्वतंत्रता के बाद 50–60 के दशक की फिल्मों में जो खलनायक होता था वो कोई साहूकार होता था, क्योंकि वह गरीबों का शोषण करता था।

60–70 दशक के बाद औद्योगिकरण प्रारंभ हुआ तब फिल्मों में फैक्ट्री मालिको को खलनायक के तौर पर देखा जाने लगा, जहां मजदूरों के शोषण को दर्शाया गया। इस औद्योगिकरण के बाद अंडरवर्ल्ड और अपराध का युग आया, जिसमें माफिया डोन खलनायक के रूप में सामने आया। इसी अतंराल में डाकुओं कि फिल्में आने लगी जिसमें यह खलनायक के तौर पर दिखाया जाता है विशेषरूप से नाइंसाफी पर बल दिया जाता था। हाल ही के दौर में नेताओं और पुलीस वालों को खलनायक के तौर पर इन्हीं फिल्मों के माध्यम से दर्शाया जाने लगा। इस प्रकार की फिल्में समाज के बारे में समाचारों से अधिक प्रभावी रूप से समाज के यर्थाथ को बयान करती थी परंतु अब फिल्म इंडस्ट्री के लोग ही खलनायक के रूप में देश के सामने आ रहे है।

श्रीदेवी, राजेश खन्ना, अमिताभ बच्चन, शाहरूख खान, सलमान खान, इत्यादि के दर्शन के लिए भक्तों से अधिक की संख्या में फैंस का उनके बंग्लों के सामने खड़े होकर घंटों प्रतिक्षा करना उनके प्रति श्रद्धा को दर्शाता है। परंतु इन्ही प्रसिद्ध लोगो के कारण ही बॉलीवुड में घोटाले की राजनीति सर चढ़ कर बोल रही है और जनता के बटुंए को कुछ ही लोगो के लिए खाली करने तक की तकनीक में मार दो या मरवा दो जैसे सूत्रों का प्रयोग किया जाने लगा है और इन सब समस्याओं का आधार ड्रग्स है जिसे समाप्त करना आवश्यक है।

♦♦♦♦♦

8

भारतीय राजनीतिः सिनेमा अभिशाप या वरदान?

चित्रा राजौरा

शोधार्थी, रूस और मध्य–एशिया अध्ययन केंद्र, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय

इस पत्र में मुख्य रूप से भारतीय सिनेमा की महत्वपूर्ण भूमिका का विश्लेषण भारतीय राजनीति के साथ किया गया है। प्रथम, भारतीय सिनेमा नागरिको का राजनीतिक जागरूकता तथा राजनिति के प्रति एक समझ प्रदान करने में सतु का काम करता है। दूसरा, सिनेमा–जगत का प्रयोग मुख्य रूप से संचार के रणनीतिक उपयोग के रूप में सार्वजनिक ज्ञान, विश्वासों और राजनीतिक मामलो पर कार्यवाही को प्रभावित करने के लिए किया जाता रहा है। तीसरा, आधुनिक समय नागरिक समाज और उच्च–तकनीकी विकास पर निर्भर है, जिसमे सिनेमा, नागरिकों के समाने समाज में फैली कुरीतियों–रिति रिवाजों ओर मानसिक–जड़तत्व के खिलाफ नागरिकों में सकरात्मक राजनितिक सक्रियता का निर्माण करती है। साथ ही, सिनेमा, राजनोति के ऐसे पहलुओ का दिखता है जिससे नागरिक राजनीति को 'हेय' की दृष्टि से देखते है। सिनेमा राजनेताओ की पारदर्शिता और जवाबदेही को काफी हद तक प्रभावित करता है, जिससे राजनेताओ में एक भय बैठ जाता है। परिणामस्वरुप राजनेताओ में 'लोकप्रियता का संकट' बना रहता है। क्योकि, सिनमा लोगो के समक्ष राजनेताओ की सच्चाई और राजनितिक अपराधीकरण का प्रतिबिंब प्रस्तुत करता है तथा लोगो में इसके विरुद्ध आवाज उठाने का जोश भी भरता है जिससे लोग समाज में आगे आकर अपनी मांगों और सुधार–कार्यो की मांग उठाते है।

आज देश में कालाबाजारी, भ्रष्टाचार, क्षेत्रवाद और जातिवाद की समस्याओं से निजात दिलाने के लिए न तो देश की राजनीतिक पार्टी अपने को आगे लाकर समाज में व्याप्त समस्याओं के समाधान करने में उचित भूमिका निभा रही है और न ही राजनेता नागरिको के समक्ष अपनी घोषणा–नीतियों की पारदशिता को सुनिश्चित करते है। वे अपनी जिम्मेदारी को समझने में असफल है जिससे भविष्य चुनावो में 'मत–संकट' बना रहता है अंतः कहा जा सकता है कि राजनेताओं को अपनी सत्ता से हाथ धोना पड़ सकता है। इस प्रकार, इस पत्र मे यह दर्शाने का प्रयत्न किया गया कि सिनेमा के माध्यम से भारतीय नागरिको, राजनोतिक अभिनेताओ और

राजनेताओं में मुख्य रूप से मानसिक–आकृति, राजनोतिक प्रक्रिया में भागीदारी, राजनोतिक विचारधारा और राजनोतिक शिष्टाचार का निर्माण करने में एक यंत्र की भूमिका निभाती है।

भारतीय राजनीति में अनेक ऐसे लोकप्रिय नेता रहे है जिसका योगदान भारतीय राजनोतिक विचारधारा के निर्माण में एक बहुत अहम रहा है, विशेषकर सिनेमा पर। ब्रिटिश उपनिवेश के समय से ही भारतीय राजनीति फिल्में काफी प्रभावशाली रही है जब फिल्मों का मुख्य उद्देश्य नागरिकों को ब्रिटिश विरोधी प्रतिक्रिया के प्रति जागरूक करना था। जिसमे मुख्य रूप से, तमिल सिनेमा ने दक्षिण भारतीय राज्य तमिलनाडू में द्रविड़ राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। राजनेताओं द्वारा द्रविड़ आन्दोलन को अधिक तेज करने के लिए फिल्म मिडिया को एक उपयुक्त उपकरण के रूप में उपयोग किया गया था।

स्वतंत्रता के पश्चात् अन्य प्रमुख फिल्मकारः दादा साहेब फाल्के, वी शांताराम, महबूब खान, राज कपूर से लेकर वर्तमान फिल्मकार विधु विनोद चोपड़ा, आमिर खान एवं राजकुमारी हिरानी आदि है। इन सब फिल्मकारों पर भारतीय राजनेता जैसे गाँधी जी, अम्बेडकर, नेहरु, मनमोहन सिंह, मोदी, आदि जैसे अनेक प्रमुख लोकप्रिय नेताओं की विचारधारो को अपना कर लोगो तक एक अहम सन्देश पहुचाने का मार्ग प्रशस्त किया है। जैसे भारत की पहली फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' का पर्दे पर आना जो गाँधी दर्शन के विभिन्न आयामों अहिंसा, प्रेम और बलिदान, हिंदू–मुस्लिम एकता, ग्रामीण–शहरी फूट डालो, अपराध, व्यवसायीकरण, महिलाओं की मुक्ति, और नैतिक पतन का डर आदि को जोड़ा गया है।

यह कोई आश्चर्य नहीं है की जब 20वी शताब्दी में हिंदी फिल्मे भारतीय संस्कृति की सबसे महत्वपूर्ण अभिव्यक्तियों में से एक बन गयी है, तो वे उस लोकतांत्रिक राजनीति के रोजमर्रा की अटूट कड़ियों और उसके पात्रो का चित्रण भारतीय सिनेमा के माध्यम से किया गया है। इसी समान, भारतीय सरकार केवल कार्यकलापों तक ही सोमित नहीं होती है बल्कि सरकारे जो भी करती हैं वह प्रासंगिक भी होता है। क्योकि वह लोगो के जीवन को भिन्न–भिन्न तरीको से प्रभावित करती है सिनेमा का प्रभावित होना लाजमी है। सिनेमा उन तरीको का भी प्रतिनिधित्व करती है जिसमे राष्ट्र इस सामूहिक हिंसा के अर्थ के साथ जूझता है, वे प्रक्रिया जिनके माध्यम से यह आगे बढ़ सकता है। जैसे ये चार फिल्मे है जो गुजरात में हुई हिंसा का वर्णन करती है– देव (2004), परजानिया (2007), फिराक (2008) और रोड टू संगम (2009) आदि में राष्ट्रिय पहचान, राजनीति और नागरिकता की अवधारणा को सूचित करती है। यह विशलेषण किया जा सकता है कि सिनेमाई चित्रण सामूहिक हिंसा का एक वास्तविक कारण बनते ह। अन्य फिल्म

पद्मावती (2017) जो लोगो में वैचारिक संघर्ष हिंसा और खुले खतरों का आकार ले रही थी। व्यवाहरिक और अनुभाविक स्तर, समाज में जो कुछ चल रहा है उसे समाज के समाने यथार्थ रूप से प्रदर्शित करना है। शुरू के समय में भले ही अधिकांश फिल्मे धामिक विषयों पर बनाई गयी, लेकिन समय के साथ–साथ सिनेमा का दायरा समस्याओं के साथ–साथ बदलता चला गया है जिसकी अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया गया है और अपने तरीके से उसका समाधान देने की भी कोशिश की गयी है। भारत में राजनोतिक नेताओ द्वारा अनेक घोटाले और भ्रष्टाचार किये जाते है ऐसे बहुत उदाहरण है जैसे– 2जी स्पेक्ट्रम लाइसेंस आवंटन घोटाला, विजय माल्या, पी. एन.बी. घोटाला, और रोटोमैक घोटाला आदि, तो दूसरी तरफ राजनोतिक अपराधीकरण का बोलबाला जिससे राजनेता सत्ता प्राप्ति के लिए अनेक नैतिक एवं अनैतिक उपाय अपनाते है। आज भी अधिकांश नेता इसी आधार पर चुनाव जीत कर राजनीति में आते हैं। ये लोग जनमानस की इस कमजोरी का पूरा लाभ उठाते हैं।

कुर्सी पाने की लालसा में यह किसी भी स्तर तक गिर जाते हैं तथा लोगों को जाति, क्षेत्र, भाषा व धर्म के नाम पर आपस में लड़ाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करत हैं। विपरीत, सिनेमा इन सब राजनोतिक हथकंडो के खिलाफ एक समझ विकसित करने में सहायक उपकरण सिद्ध होता है इस क्षेत्र, 2013 सत्याग्रह फिल्म, 2008 हल्ला बोल, नायक 2001, आदि फिल्मे है जो सरकार प्रति भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज उठाई गयी। जिसके कारण इसका विपरीत असर राजनेताओं को राजनीति में अपनी लोकप्रियता को स्थिर रखने पर पड़ा है। जैसे 2019 के भारत के लोकसभा चुनाव होने से पहले प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी के बारे में एक बायोपिक फिल्म को बनाया गया जो तेजी से प्रचार–माध्यम का स्त्रोत बनी। इसके अलावा, ठाकरे और द एक्सीडेंटल प्राइम मिनिस्टर जैसे राजनीतिक बायोपिक्स है।

राजनोतिक दलों के बढ़ने स और जनता से वोट की अपील राजनोतिक प्रचार–प्रसार के लिए अभिनेताओं का आगे लाते है, ऐसे कई उद्धरणों में शत्रुघन सिन्हा, हेमा मालानी, और रेखा आदि है। असल में, राजनीति में भीड़ और वोट जुटाने के लिए जहां बाहुबल को कोसते हैं, तो सितारों की भागीदारी को भी उसी दर्जे में रखा जा सकता है। राजनीति में अभिनेता के आने पर अभिनेता रजनीकांत का कहना है कि ''मुख्यमंत्री के रूप में खुद को देखने के बारे में मैं कभी कल्पना भी नहीं करता। विधानसभा के भीतर हिस्सा लेने के बारे में मैं सोच भी नहीं सकता। ये हरगिज सम्भव नहीं है। मैं पार्टी मुखिया की भूमिका में रहूँगा। इस स्थान पर 'आध्यात्मिक राजनीति' को आगे बढ़ाने की बात की है'' हालांकि, सिनेमा के कलाकार भी अक्सर

राजनीति की बुराई करते है यह अलग बात है की जैसे वे इस खेल में सम्मिलित होते है वैसे ही वे अपने को इन आवश्यकताओं के अनुसार ढाल लेते है। बशर्त उनके पास नेतृत्व के गुण हो जिससे वे चुनाव में प्रारभिक सफलता के बाद आवश्यक लोगो से जुड़ सके।

इस प्रकार, अभिनेताओं का राजनीति में आना और नेताओ द्वारा उनको मत बटोरने में एक यंत्र के रूप में इतेमाल किया जाना, एक वाद–विवाद का प्रश्न रहा है। यद्यपि, भारतीय राजनीति में अभिनेताओं का प्रतिनिधित्व कोई नई घटना नहीं है। 1960 के दशक में, कपूर राजवंश के पृथ्वी राजकपूर संसद में राज्यसभा के लिए नामित सदस्य के रूप में प्रवेश किया, 1979 में अभिनेता देवानंद की अगुवाई में "नेशनल पार्टी" का गठन किया गया। 1984 में अभिताभ बच्चन उत्तर–प्रदेश के लोकसभा चुनाव में 68.2 प्रतिशत मत प्राप्त किये।

2019 लोकसभा चुनाव ओर विजेता–राजनीतिक अभिनेता

राज्य	अभिनेता	मार्जिन से प्राप्त–मत
गुरूदासपुर (पंजाब)	सन्नी देओल (बी.जे.पी.)	82459 (7.47 प्रतिशत)
दिल्ली (पूर्वी दिल्ली)	गौतम गंभीर (बी.जे.पी.)	391222 (31.1 प्रतिशत)
अमेठी	स्मिरिती ईरानी (बी.जे.पी.)	55120 (5.85 प्रतिशत)
मथुरा	हेमा मालिनो (बी.जे.पी.)	293471 (26.61 प्रतिशत)
गोरखपुर	रवि किशन (बी.जे.पी.)	301664 (25.46 प्रतिशत)
चंडीगढ़	किरन खेर (बी.जे.पी.)	46970 (10.29 प्रतिशत)
दिल्ली (उत्तर–पूर्वी दिल्ली)	मनोज तिवारी (बी.जे.पी.)	366102 (25.05 प्रतिशत)

स्रोतः Election Commission of India, Elections,2019 (17 LOK SABHA)

भारत में कई मशहूर हस्तियों ने भारतीय राजनीति में अपनी अमिट छाप छोड़ी है। विशेषकर दक्षिण भारत में, एम.जी. रामचंद्रन अर्थात एम.जी.आर. को तमिल सिनेमा के सबसे प्रभावशाली अभिनेताओं में से एक माना जाता है, वे सत्ता में आए और तमिलनाडु के मुख्यमंत्री बने। जयललिता ने एक व्यक्तित्व पंथ का गठन किया था और अपने अनुयायियों के बीच अम्मा के रूप में जानी जाती थीं। यद्यपि उनके भ्रष्टाचार के लिए बदनाम, उन्हें राज्य में उनके लोक कल्याण के लिए याद किया जाता है। स्मृति ईरानी का उदाहरण भी है जो 2014 में अमेठी सीट हारने के बाद भी राजनीति में अपनी मेहनत से कायम हैं और 2019 में राहुल गांधी को हरा दिया। अंतः यह निष्कर्ष निकला जा सकता है कि चुनावी तंत्र उपभाक्ता बाजार के समान है जहा उपभोक्ता को समर्थन देने के लिए लोकप्रियता, सामूहिक प्रतिध्वनि और मशहूर हस्तियों के ग्लैमर

का उपयोग किया जाता है। इसी प्रकार, सभी राजनोतिक पार्टी अलग–अलग तंत्रों के माध्यम से अपने उम्मीदवारों को खरीदने के लिए मतदाताओ को लुभाने की कोशिश करते है। और 'थर्ड आल्टर्नेटिव' के रूप में विश्वसनीयता के आधार पर समर्थन प्राप्त किया जाता है। लेकिन एक अभिनेता का राजनोतिक सफर आसान नहीं होता है लोगों को उनसे अधिक आशाएं होती है और उनकी अपने चुनावी कर्तव्यो को निभाने की अधिक जिम्मेदारी बढ़ जाती है। इसका नकरात्मक प्रभाव यह पड़ता है कि भारत में अंधिकांश लोग राजनीति को शंका की दृष्टि एवं भारतीय राजनेताओ को भी अपराधिक पृष्ठभूमि और भ्रष्टाचार क्षेत्र से देखा जाता है इसी आधार पर, राजनोतिक अभिनेताओं को भी अपनी लोकप्रियता खोने का भय रहता है। दूसरा, राजनोतिक अभिनेता शायद ही वास्तविक राजनोतिक–सामाजिक मुद्दों पर अपनी आवाज उठा पाते है तथा बहुधा उनकी सच्ची वीरता, साहस और निष्ठा के आधार पर लोग उनको चुनते है। यद्यपि, समान मूल्यों और लोकाचार शायद ही कभी वास्तविक राजनोतिक जीवन में परिलक्षित होते है और असली जीवन तक ही सोमित रहते है। परिणामस्वरुप, अभिनेता एक अच्छे राजनीतिज्ञ नहीं बन सकते बल्कि एक अभिनेता होने के नाते उन्हें चुनने के लिए एकमात्र मानदंड माना जा सकता है।

आज भारत भूमंडलीकरण के तीसरे दौर से गुजर रहा है। भारतीय सिनेमा ने इनकी अनदेखी नहीं की है समाजिक, राजनोतिक और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बौद्धिक क्रांति की दिशा प्रदान करने में एक अविश्वसनीय भूमिका निभाई है साथ ही शिक्षा–प्रणाली को भी उजागर किया है। स्पष्ट है कि सिनेमा माध्यम समाज से अभिन्न रूप से जुड़ा है। भारतीय सिनेमा ने राजनोतिक व्यस्था और सरकार की व्यवहारिक गतिविधियों और प्रकियाओं को एक दिशा प्रदान करने में मदद की है। सिनेमा एक शक्तिशाली उपकरण बनता जा रहा है जो विचारो, दृष्टिकोणों सामाजिक मानदंडो को आकार देता है अन्य माध्यम की तुलना में विचारो को फैलने में अधिक क्षमता रखता है।

♦♦♦♦♦

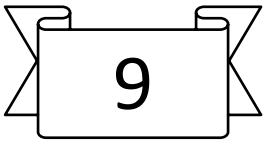

अभिनेता व राजनेताः देश में विवादों के आधारस्तम्भ?

प्रियंका बारगल

शोधार्थी, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर, (म.प्र.)

हितेन्द्र बारगल

सहायक प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, गुनौर, जिला पन्ना, (म.प्र.)

हमारा देश भारत विश्व के प्रमुख लोकतांत्रिक देशों में से एक है। किसी भी लोकतांत्रिक देश में जहाँ जनता ही सर्वेसर्वा होती है, वही राजनीतिक दलो का भी अपना महत्वपूर्ण स्थान होता है तथा इन राजनीतिक दलों का मुख्य नियंत्रण राजनेताओं के हाथ में होता है। ''राजनेता'' से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है, जो राजनीति में सक्रिय हो, किसी पद को धारण किए हुए हो, या पद प्राप्ति के लिए प्रयासरत हो।

प्राचीन समय की हम बात करें, तो हम देखते हैं ,कि पूर्व में राजनेताओं का मुख्य उद्देश्य न केवल देश का सर्वांगीण विकास करना होता था, वरन वे कुशल नेतृत्वकर्ता भी होते थे, सही अर्थो में राजनेता ऐसे ही होना चाहिए ,जो अपनी पार्टी के साथ–साथ देश का भी प्रभावपूर्ण नेतृत्व कर सके तथा विश्व में अपने देश की एक प्रभावशाली एवं गरिमामय छवि को प्रस्तुत कर सके। किंतु आज कुछ राजनेता अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए, राजनीति को कलंकित कर रहे हैं, वे अपने स्वार्थ में इतने अंधे हो गए हैं, कि आज की राजनीति प्रतिष्ठित व गरिमामय संगठन ना होकर अपराधियों का गढ़ बन चुकी है। आज कुछ राजनेता महत्वपूर्ण पद पाने हेतु , किसी भी स्तर तक गिर सकते है। आज राजनीति, जिसमें प्राचीन समय में नैतिकता ही सर्वोपरि थी, उसी का ही हनन सबसे ज्यादा किया जा रहा है तथा अपनी पार्टी को जिताने के लिए कुछ नेता वाद– विवाद का प्रयोग करने में भी नहीं हिचकिचाते ।

वर्तमान में कुछ राजनेता अपने ओजस्वी भाषण एवं प्रभावी नेतृत्व के कारण नहीं पहचाने जाते, वरन उनका मुख्य उद्देश्य विपक्ष की बुराई करना, वाद–विवाद को बढ़ावा देना तथा व्यक्तिगत तौर पर किसी दूसरे के व्यक्तित्व पर छींटाकशी करना रह गया है। वर्तमान में संसद, जो की एक गरिमामय संस्था है, वह कुछ नेताओं के कारण वाद–विवाद का केंद्र बन गई है, तथाकथित

नेताओ द्वारा आरोप–प्रत्यारोप करके संसद की ही नहीं, बल्कि पूरे भारत के लोकतंत्र की गरिमा को कलंकित किया जाता हे।

राजनीति में पैसा ही सर्वे–सर्वा होता है, जो राजनेता जितना अधिक पैसा खर्च करता है, उसे उतना ही उच्च पद प्राप्त होता है। अतः कुछ राजनेता अपने लिए पैसों का प्रबंध करने हेतु अपराधियों से गठबंधन कर लेते हैं। अपराधी द्वारा तो राजनीति को एक साफ सुधरे आजीविका या पेशे के रूप में देखा ही जाता है, क्योंकि इससे वह अपने पुराने अपराधों को न केवल छुपा सकते हैं वरन अपने पैसों का गलत ढंग से उपयोग करके बाहुबली तक बन सकते हैं, वहीं दूसरी तरफ आज के कुछ अभिनेता भी प्रायरू अपने करियर की ढलान या उतार पर राजनीति में अपनी किस्मत आजमाते हैं।

ष्अभिनेताष् एक ऐसा व्यक्ति होता है, जो किसी चलचित्र या नाटक में अभिनय करता है, उसका वास्तविकता से कोई लेना–देना नहीं होता है, वह तो निर्देशक की कठपुतली मात्र होता है, जिसका प्रमुख उद्देश्य किसी दिए गए पात्र को अपने मेहताने के बदले में जीवंत करना मात्र होता है। वर्तमान में, गौर किया जाए तो, अभिनेता व राजनेता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। प्रायः देखा या सुना जाता है, कि राजनेता एक अच्छे अभिनेता होते हैं, जो अपनी लच्छेदार बातों से अथवा झूठे वादों द्वारा भोली–भाली जनता को विश्वास में लेकर कर लूटते रहते हैं तथा एक बार चुनाव जीतने के बाद उन्हें जनता की समस्याओं से कोई सरोकार नहीं रहता, बल्कि वह पुनः मीठी–मीठी बातों से जनता को मूर्ख बनाते रहते हैं, तथा 5 वर्षों के पश्चात् चुनाव या उपचुनाव होने पर ही अपनी शक्ल जनता को दिखाते हैं।

इसी प्रकार अभिनेता भी अपनी फिल्मों की सफलता के लिए जनता–जनार्दन का उपयोग करते हैं। कुछ अभिनेताओं को जनता की भावनाओं का कोई मोल नहीं होता, उन्हें तो बस अपनी फिल्मों को सफल बनाने से मतलब होता है। इस परिप्रेक्ष्य में अगर मीडिया की भूमिका पर प्रकाश डालें तो, मीडिया भी कई बार इन्हीं तथाकथित राजनेताओं, अभिनेताओं का ही साथ देकर एक ही घटना को बार–बार दिखा कर अपने न्यूज चौनलों की "टेलोविजन रेटिंग प्वाइंट" बढ़ाने में लगी रहती है।

प्रायः राजनेता एवं अभिनेता अपनी लोकप्रियता बढ़ाने के नाम पर वाद–विवाद को तूल देते हुए दिखाई देते हैं। कहावत भी है ष्बदनाम हुए तो क्या हुआ नाम तो होगाष् बस इसी कहावत को चरितार्थ करने के लिए तथा कुछ दिनों तक अखबार के मुख्य पृष्ठ पर बने रहने या टेलीविजन

पर न्यूज का हिस्सा बने रहने के लिए नेताओं–अभिनेताओं द्वारा वाद–विवाद को तूल दिया जाता है। राजनेता अपनी पार्टी को अधिक वोट दिलाने के लिए जहां जनता के चहेते लोकप्रिय अभिनेता को टिकट दिला कर अपना पक्ष मजबूत करना चाहते हैं, वहीं अभिनेता–अभिनेत्री भी अपने फिल्मी करियर के ढलान पर राजनीति को एक बढ़िया विकल्प के रूप में देखते हुए अपनी लोकप्रियता को भुनाने का तरीका तलाशते दिखाई देते हैं। इस लोकप्रियता के दलदल में अगर उन्हें किसी और के व्यक्तित्व पर कीचड़ भी उछालना पड, या किसी वाद–विवाद में भी फंसना पड़े तो वह परहेज नहीं करते। अभिनेता जब किसी पात्र का अभिनय करता है, तो उसकी कोई जवाबदेहिता नहीं होती है, हां यह अलग बात है, कि आज की युवा पीढ़ी के लिए उनके आदर्श यही अभिनेता बनते जा रहे हैं। शक्तिमान का उदाहरण किसी से छिपा नहीं है, तत्कालीन समय में इस तथाकथित रोल मॉडल के कारण कई बच्चों की जान पर बन आई थी ।

राजनेता से आम जनता की यह अपेक्षा रहती है, कि वह न केवल बड़े–बड़े भाषण एवं झूठे वादे करें, बल्कि उन्हें सच भी साबित करें तथा देश के सर्वांगीण विकास के लिए पूर्ण रूप से योगदान दें अर्थात एक नेता से अभिनेता की भांति व्यवहार की आशा नहीं की जा सकती है अभिनेता तो फिल्म में मात्र अभिनय करते है, उनका वास्तविकता से कोई सम्बन्ध नहीं होता, लेकिन राजनेता को तो असल जिंदगी में हीरो बनना चाहिए, उसे अपने अच्छे कार्यो द्वारा न केवल जनता की रक्षा करनी चाहिए,बल्कि जनता के साथ–साथ सम्पूण देश का विकास भी करना चाहिए। किंतु सिक्के का दूसरा पहलू यह है, कि अभिनेता और राजनेता अपने धन, शक्ति एवं लोकप्रियता के घमंड में चूर होकर, राह में सोते राहगीरों को कुचलने, जंगलों में मूक जानवरों पर अपने हथियारों का प्रयोग करने में तथा देर रात डांस–पार्टियों में नशे में धुत होकर अनैतिक कार्य करने तथा अपने लिए वाद–विवाद उत्पन्न कराने को अपनी शान समझते हैं,किन्तु कभी–कभी यह लोकप्रियता राजनेता या अभिनेता के गले का फंदा भी बन जाती है, जिसका परिणाम किसी की आत्महत्या या हत्या के रूप में भी परिणित हो सकता है, अथवा किसी बेकसूर व्यक्ति को अपनी जान भी गँवानी पड़ सकती है, ऐसी स्थिति किसी भी लोकतंत्र के लिए सही नहीं कही जा सकती।

राजनेता तथा अभिनेता दोनों को ही अपनी भूमिका निभाने के लिए एक मंच की तथा संवाद अथवा भाषण सुनाने के लिए जनता की आवश्यकता होती है। पुराने समय में मीडिया की भूमिका व साधन सीमित थे, किंतु आज सोशल मीडिया के माध्यम से नेता–अभिनेता अपनी हर बात को कुछ पलों में ही जनता तक पहुंचा सकते हैं तथा कई बार जल्दबाजी में दिए गए बयान

वाद–विवाद का कारण भी बन जाते हैं, जिससे ना केवल उनकी व्यक्तिगत छवि धूमिल होती है वरन ,लोग मीडिया को तथा दूसरे अभिनेता–राजनेता को भी संदेह की दृष्टि से देखने लग जाते हैं। अभिनेता को भी अपनी भूमिका का निर्वहन करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि, वह समाज में अनगिनत लोगों के लिए प्रेरणा है, उनके लिए मार्गदर्शक है, अतः उसे अपने रोल इस प्रकार से चुनने चाहिए, जो किसी युवा व्यक्ति या बच्चों को ना भटकाए, बल्कि उन्हें सही शिक्षा दें। इसी प्रकार राजनेताओं को भी अपने व्यक्तिगत स्वार्थों से दूर रहकर तथा अनावश्यक वाद–विवादों से बचना चाहिए तथा अपना सारा ध्यान देश की प्रगति में लगाना चाहिए।

♦♦♦♦♦

डी.सी.आर.सी.

विकासशील राज्य शोध केन्द्र

अकादमिक अनुसंधान केन्द्र भवन

गुरू तेग बहादुर मार्ग

दिल्ली विश्वविद्यालय

दिल्ली-110007